सुनो कहानी

1

प्रकाशक

धर्मोदय परीक्षा बोर्ड

Scanned by CamScanner

सुनो कहानी

भाग-1

प्रकाशक
धर्मोदय परीक्षा बोर्ड
खुरई रोड - सागर (म.प्र.)
मो. नं. 094249-51771

Scanned by CamScanner

•
कृति
सुनो कहानी भाग-1
•
संस्करण
प्रथम, मार्च 2007
द्वितीय, अप्रैल 2008
तृतीय, मई 2010
•
आवृत्ति
1100
•
सहयोग राशि
15/-
•
प्राप्ति स्थान
धर्मोदय परीक्षा बोर्ड
खुरई रोड - सागर (म.प्र.)
मो. नं. 094249-51771
•
मुद्रक
विकास आफसेट, भोपाल

दो शब्द

इस पुस्तक में बच्चों को सुनाने के लिए शिक्षाप्रद 75 कहानियों का संकलन आपके समक्ष प्रस्तुत है। इन कहानियों को देने का उद्देश्य है कि कहानी से बालमन प्रभावित होकर शिक्षा ग्रहण कर ले, तद्रूप आचरण कर जीवन को अच्छा बनाने के लिये तैयार हो जाये। शिक्षकों से निवेदन है कि इन कहानियों को रोचक बनाकर सुनाने का प्रयास करें। इस संकलन में जिन मुनिराजों, आर्यिकाओं, त्यागी वृतियों, ब्रह्मचारी भाईयों एवं विद्वान् गृहस्थ श्रावकों की कहानियों का समावेश किया गया है। उन सबके प्रति मैं अपने हृदय के गहनातिगहन तल से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

प्रकाशक

अनुक्रम

(खण्ड-1)
1. कौण्डेश की कथा 5
2. फूलों पर शयन करने का फल 5
3. कपटी पीटा जाता है 6
4. प्रशंसा में नहीं बहना 7
5. माँ की सेवा का फल 7
6. बड़ों की नहीं मानने से हानि 8
7. नियम का फल 9
8. णमोकार मंत्र का प्रभाव 10
9. कुत्ते की कथा 11
10. बैल की कथा 11

(खण्ड-2)
11. जीवहिंसा का पाप 12
12. मीठा बोलो, सभी प्यार करेंगे 12
13. सेवा और श्रम की महिमा 13
14. गुरुभक्ति 14
15. ईश्वर देख रहा है 15
16. मांस खाने से नरक दुःख 16
17. सत्य बोलने से लाभ 17
18. दृढ़सूर्य चोर का मन्त्र मनन से उद्धार 18
19. प्रिय वचन 19

(खण्ड-3)
20. स्वार्थी भूखे रहे 20
21. लालच का फल 20
22. वेश्या सेवन 21
23. शिकार करना 22
24. चोरी करना 23
25. परस्त्री सेवन 24
26. मान से मर गया 24
27. गुस्से की अचूक दवा 25
28. जल्दबाजी नहीं करना 26
29. त्याग की महिमा 28
30. अभयदान का फल 28
31. जुआ व्यसन से दुर्दशा 29

(खण्ड-4)
32. महासती अत्तीमव्वे 30
33. महारानी शान्तलादेवी 31
34. पाप का मूल कारण परिग्रह 32
35. मायाचारी मुख से

Scanned by CamScanner

प्रकटी 33
36. मित्रता कैसे बनी रहे 34
37. शिवभूति मुनिराज 35
38. अकृतपुण्य 36
39. औषधि दान का फल 38
40. विषापहार 39
41. अध:पतन का कारण 39
42. हींग की डिब्बी में केसर 40
43. द्वीपायन मुनि 42
44. परोपकार 43
45. दया 45
46. मुनि सेवा 46

(खण्ड-5)

47. सोचने की बात: यह सौदा और खरीददार 48
48. उदारता की जीत 48
49. हिंसा से डर 50
50. पूजा का फल 51
51. त्याग की महिमा 53
52. तीन लाख की तीन बातें 55
53. विशल्या की कथा 59
54. ब्रह्मगुलाल मुनि 60
55. चार मूर्ख 64
56. दीपक और तलवार 67
57. राजा का त्याग 69
58. नेक काम 71
59. अनोखा वैरागी 72

(खण्ड-6)

60. भक्ति में शक्ति 73
61. रूपवान राजा 75
62. भावना का चमत्कार 78
63. कुलभूषण-देशभूषण 81
64. सुकुमाल मुनि 82
65. अद्भुत अवधूत का अपरिग्रह 86
66. ईमानदार इन्सान का इम्तिहान 88
67. व्यसन की आग : सब करदे राख 89
68. अपना जीवन सबको प्यारा 92
69. थोड़े के लिए बहुत हानि 96
70. अहं का विसर्जन 99
71. चन्द्रगुप्त मुनि द्वारा गुरुसेवा 102
72. रहमान का दयामय त्याग 103
73. एक साधै सब सधै 105
74. ईर्ष्या से नहीं मित्रता से जीतो 109
75. नैतिक आदर्श 111

[खण्ड-1]

1. कौण्डेश की कथा

कुरुमणि ग्राम में एक गोविन्द नाम का ग्वाला रहता था। उसने कोटर से निकालकर एक प्राचीन शास्त्र की पूजा की तथा भक्तिपूर्वक पद्मनन्दी मुनि के लिये वह शास्त्र दिया।

उस शास्त्र के द्वारा पहले के कितने ही मुनियों ने स्वयंपूजा करके तथा दूसरों से कराकर व्याख्यान किया था और उसके बाद वे उस शास्त्र को उसी कोटर में रखकर चले गये थे।

गोविन्द निदान से मरकर उसी ग्राम में ग्राम प्रमुख का पुत्र हुआ। एक बार उन्हीं पद्मनन्दी मुनि को देखकर उसे जातिस्मरण हो गया, जिससे तप धारण कर वह कौण्डेश नाम का बहुत बड़ा शास्त्रों का पारगामी मुनि हुआ। वह श्रुतज्ञान–शास्त्र दान का फल है।

2. फूलों पर शयन करने का फल

एक राजा हमेशा फूलों की शय्या पर सोता था। एक दिन शय्या बनाने वाली दासी (मालिन) ने सोचा इस शय्या पर सोने में कैसा लगता होगा, वह शय्या पर सो गई। लेटते ही उसकी नींद लग गई। तभी राजा आ गया। शय्या पर दासी को सोया देख उसने क्रोधित होकर दासी को कोड़े मारने की आज्ञा दे दी।

दासी को जैसे-जैसे कोड़े मारे जा रहे थे दासी खिलखिला कर हँसती जा रही थी। राजा ने दासी की हँसी को देख आश्चर्य-चकित हो उससे हँसने का कारण पूछा। दासी ने कहा–"मैं बिना मन

Scanned by CamScanner

के पाँच-दस मिनट शय्या पर सो गई, उसका फल इतने कोड़े की मार मिल रही है तो प्रसन्नता से हमेशा इस शय्या पर सोने वाले को कितनी मार पड़ेगी, कितना दुःख मिलेगा, कहा नहीं जा सकता है।'' यह सुनकर राजा को अपनी गलती का अहसास हो गया। उसने उस दिन से फूलों की शय्या पर सोने का त्याग कर दिया।

सारांशः फूल आदि वनस्पतियों में भी जीव होते हैं, वे जीना चाहते हैं, सुख-दुःख का अनुभव करते हैं, इसलिए बिना प्रयोजन कभी फूल नहीं तोड़ना चाहिए।

3. कपटी पीटा जाता है

एक संगीत कक्ष में बाँसुरी, ढोलक, मंजीरा, रागपेटी, वीणा आदि वाद्ययंत्र रखे हुए थे। एक दिन एक बच्चा वहाँ आया। उसने ओठों से लगाकर बाँसुरी बजाई, ढोलक को डंडे से पीटा / ठोका और भाग गया। यह सब देख ढोलक को क्रोध आ गया। उसने बाँसुरी से पूछा, बहिन बाँसुरी! अपन दोनों संगीत में काम आती हैं फिर बच्चे तक भी इतना पक्षपात क्यों करते हैं कि तुम्हें तो ओठों से लगाते हैं और मुझे डंडे से मारते, ठोकते हैं।

बाँसुरी ने कहा- बहिन! लोग पक्षपात नहीं करते हैं अपितु वे अपन दोनों के काम के अनुसार व्यवहार करते हैं। देखो, तुमने अपनी पोल को अन्दर अच्छी तरह छिपा रखा है और मैंने अपनी पोल को सात-सात छिद्रों से बाहर दिखा दिया है। तुम छल करती हो इसलिए पीटी जाती हो और मैं छल नहीं करती, मैंने अपने दोषों को छुपाया नहीं है, इसलिए लोग मुझे ओठों से लगाते हैं।

सारांशः छल-कपट (किसी से छिप कर काम) कभी नहीं करना चाहिए। छल करने को लोग यहाँ डंडे मारते हैं और वह मरकर अगले भव में गाय-भैंस आदि पशु बनता है तो वहाँ पर भी डंडों की मार खानी पड़ती है।

4. प्रशंसा में नहीं बहना

एक दिन एक कौए के मुँह में रोटी का टुकड़ा देख उसको प्राप्त करने के लोभ में एक लोमड़ी उसके पास पहुँची और कौए की प्रशंसा करते हुए बोली- मामा! तुम बड़ा मीठा बोलते हो, बहुत अच्छा गाते हो, मुझे भी एक भजन सुनाओ। कौआ कुछ नहीं बोला, उसको मालूम था कि मैं बोलूंगा तो मेरे मुँह का ग्रास गिर जायेगा। लोमड़ी चापलूसी करती हुई बार-बार उसकी प्रशंसा करने लगी।

आखिर कौए को यह विश्वास हो गया कि मैं वास्तव में बहुत मीठा बोलता हूँ, अच्छा गाता हूँ वह अपनी प्रशंसा के शब्दों में बह गया और उसने बोलना शुरू किया। जैसे ही वह बोलने लगा उसके मुँह का ग्रास नीचे गिर गया। लोमड़ी ग्रास लेकर भाग गई। अतः कभी अपनी प्रशंसा में नहीं बहना चाहिए।

सारांश : कोई अपनी प्रशंसा करे तो यह सोचकर कि मुझ से ज्यादा गुणवान, धनवान, सुन्दर अनेक लोग हैं, गर्व नहीं करना चाहिए।

5. माँ की सेवा का फल

एक बेटा अपनी अंधी माँ की आँखों में रोशनी लाने के लिए अनेक प्रयास कर रहा था लेकिन उसको सफलता नहीं मिली।

Scanned by CamScanner

एक दिन एक देव उसकी मातृ-भक्ति की परीक्षा करने के लिए एक वैद्य का रूप बनाकर आया और बोला- ''बेटा! मैं तुम्हारी माँ की आँखों में रोशनी ला दूंगा, लेकिन तुम अंधे हो जाओगे।'' बेटे ने कहा- ''वैद्यजी! कोई बात नहीं मैं अंधा होकर भी खुश रहूँगा।'' देव ने खुश होकर आशीर्वाद, वरदान दे दिया। ''जाओ, तुम भी अंधे नहीं होओगे और तुम्हारी माँ की आँखों में भी ज्योति आ जायेगी।''

सारांश : जो जी-जान से माँ की सेवा करता है, वह स्वयं भी सुखी होता है और उसके माता-पिता भी सुखी होते हैं।

6. बड़ों की नहीं मानने से हानि

एक गरीब के बेटे ने बहुत मेहनत करके अच्छा ढोल बजाना सीखा। राजा ने अपने बच्चे के जन्मदिवस पर देश-देश के ढोलियों को आमंत्रित किया। वह गरीब ढोली भी अपने बेटे के साथ राजा के यहाँ ढोल बजाने गया। वहाँ आयोजित प्रतियोगिता में ढोली का लड़का अव्वल आया। राजा ने उसे स्वर्ण आभूषणों का इनाम दिया।

गरीब ढोली अपने बेटे के साथ घने जंगल से गुजर रहा था। लड़का धनप्राप्ति की खुशी में उस जंगल में ही ढोल बजाने लगा। उसके पिता ने उसे ढोल बजाने हेतु मना किया और बजाने से होने वाली हानि को बताया। लेकिन वह नहीं माना।

फल यह हुआ कि जंगल में डाकुओं का दल उनके सामने आकर खड़ा हो गया और डरा कर उनसे आभूषण लूट लिये। वे पुनः गरीब हो गये। इसका मुख्य कारण बड़ों का कहना नहीं मानना था।

सारांश : बड़ों की बात हमेशा माननी चाहिए।

7. नियम का फल

एक व्यक्ति ने एक संत से ''मैं आज किसी भी वस्तु को बिना दिये ग्रहण नही करूँगा'' यह नियम ले लिया। वह शाम के समय जंगल में शौच से आकर लोटा माँजने के लिए मिट्टी कुरेद रहा था कि उसके हाथ में एक कलश के मुँह का किनारा लगा। उसने जमीन खोदी तो उसमें से स्वर्ण से भरा एक कलश निकला। सोना देख उसका मन बदल गया, लेकिन उसने अपना नियम नहीं तोड़ा।

घड़े को पुनः जमीन में दबा दिया एवं निशान के रूप में एक छोटी सी लकड़ी उसके ऊपर गाड़ कर घर आ गया। भोजन आदि आवश्यक कार्यों को करके जब वह बिस्तर पर लेटा तो उसको नींद नहीं आ रही थी ? उसे करवटें बदलते देख उसकी पत्नी ने पूछा- आज आपको नींद क्यों नहीं आ रही है ? उसने अपने मन की बात को छिपाने का बहुत प्रयास किया। लेकिन पत्नी के बार-बार पूछने पर उसने पूरी बात बता दी।

जब वह पत्नी को पूरी बातें बता रहा था तब चोरों ने उसकी बातें सुन लीं और धन लेने के लिए वे जंगल में पहुँच गये। उन्होंने गड्ढा खोदकर घड़ा निकाल कर देखा तो घड़े में तो बिच्छू साँप आदि विषैले जानवर भरे थे। साँप बिच्छुओं के काटने से उनको बहुत गुस्सा आया। उन्होंने सोचा उस धूर्त को इसका मजा अवश्य चखाना चाहिए। इसलिए उन्होंने घड़े को बन्द कर उठाया और गरीब की झोपड़ी के आगे लाकर पटक दिया।

धमाके की आवाज सुनकर गरीब ने बाहर आकर देखा तो

Scanned by CamScanner

उस घड़े में हीरे-मोती जगमगा रहे थे। यह देख उसने आश्चर्य-चकित हो पत्नी से कहा- ''देखो यदि मैं नियम तोड़ देता तो धन भी जाता और धर्म भी, नियम नहीं तोड़ा तो धर्म भी बच गया और धन भी घर पर आ गया।''

सारांशः नियम का पालन अच्छी तरह करने से हमेशा लाभ-ही-लाभ होता है।

8. णमोकार मंत्र का प्रभाव

एक दिन एक ग्वाला वन से अपने घर आ रहा था। शीतकाल का समय था, कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। उसे रास्ते में ऋद्धिधारी मुनि के दर्शन हुये, जो एक शिलातल पर बैठकर ध्यान कर रहे थे। ग्वाले को मुनिराज के ऊपर दया आयी और घर जाकर भी पुनः लौट आया तथा मुनिराज की वैय्यावृत्य करने लगा।

प्रातःकाल होने पर मुनिराज का ध्यान भंग हुआ और ग्वाले को निकट भव्य समझकर उसे णमोकारमन्त्र का उपदेश दिया। अब तो उस ग्वाले का यह नियम बन गया कि वह प्रत्येक कार्य के प्रारम्भ करने पर णमोकारमन्त्र का 9 बार उच्चारण करता।

एक दिन वह गाय भैंस चराने के लिए गया था। भैंसें नदी में कूदकर उस पार जाने लगी, अतः ग्वाला उन्हें लौटाने के लिए अपने नियमानुसार णमोकार मन्त्र पढ़कर नदी में कूद पड़ा। पेट में एक नुकीली लकड़ी चुभ जाने से उसका प्राणान्त हो गया। वह णमोकारमन्त्र के प्रभाव से सेठ के यहाँ सुदर्शन नाम का पुत्र हुआ। शीलशिरोमणि सुदर्शन ने उसी भव से निर्वाण प्राप्त किया ।

9. कुत्ते की कथा

एक बार कुछ ब्राह्मण मिलकर यज्ञ कर रहे थे कि एक कुत्ते ने आकर उनकी हवन-सामग्री जूठी कर दी। ब्राह्मणों ने क्रुद्ध हो उस कुत्ते को इतना मारा कि उसके प्राण कंठगत हो गये। संयोग से महाराज सत्यंधर के पुत्र जीवन्धरकुमार उधर से आ निकले, उन्होंने कुत्ते को मरते हुए देखकर उसे णमोकार मन्त्र सुनाया।

मन्त्र के प्रभाव से कुत्ता मरकर यक्ष जाति का इन्द्र हुआ। वह अवधिज्ञान से अपने उपकारी का स्मरण कर कुमार जीवन्धर के पास आया और नाना प्रकार से स्तुति-प्रशंसा कर उन्हें इच्छित रूप बनाने और गाने की विद्या देकर अपने स्थान पर चला गया।

इस कहानी से स्पष्ट है कि कुत्ता भी इस महामन्त्र के प्रभाव से देवेन्द्र हो सकता है, फिर मनुष्यजाति की बात ही क्या ?

10. बैल की कथा

णमोकार मंत्र के प्रभाव को प्रकट करने वाले अनेक कथानक शास्त्रों में उपलब्ध होते हैं जैसे-सेठ पद्मरुचि की पर्याय में रामचंद्र जी के जीव ने मरते हुये बैल को णमोकारमन्त्र सुनाया जिससे वह (बैल का जीव) राजपुत्र हुआ बाद में देव व मनुष्य के कुछ भवों को धारण कर विद्याधरों का स्वामी सुग्रीव हुआ, श्रीराम के साथ मित्रता स्थापित कर कुछ काल तक राज्य करने के पश्चात् श्रीराम के साथ मुनि दीक्षा धर तपश्चरण कर श्रीरामचंद्र जी के साथ ही तुंगीगिरि से मोक्ष पधार गया।

Scanned by CamScanner

[खण्ड-2]

11. जीवहिंसा का पाप

एक व्यापारी था। वह बहुत धनी था। एक दिन एक भिखारी उस व्यापारी के घर पर भीख माँगने गया। व्यापारी ने गरीब समझकर पाँच रुपया उस भिखारी को दे दिया। वह रुपया लेकर बाजार गया और उसने उससे सूत खरीदा। उस सूत से उसने मछली पकड़ने का एक छोटा जाल बनाया और रोज नदी पर जाकर मछलियाँ पकड़ने लगा। वह मछलियों को बाजार में ले जाकर बेचता और अपना भरण-पोषण करता। ऐसा करते हुए उसे बहुत साल हो गये।

इधर वह व्यापारी, जिसने उसे पाँच रुपया दिया था, धीरे-धीरे अपनी सारी सम्पत्ति खो बैठा। वह राजा से रंक हो गया। उसकी स्थिति उसी दिन से बिगड़ने लगी थी। जिस दिन उसने पाँच रुपया भिखारी को दिया था। ऐसा इसलिये हुआ क्योंकि वह मछली पकड़ने का जाल उस व्यापारी के पैसों से ही बना था। वह भिखारी मछली पकड़कर बाजार में बेचता, उसकी मछलियाँ माँसाहारी लोग खरीदकर खाते थे इसलिये जीवहिंसा का पाप भी उस व्यापारी को लगा और उसकी सारी सम्पत्ति-धन नष्ट हो गयी।

सारांश : इसलिये हमें चाहिये कि जो भी भिखारी, साधु, फकीर अपने दरवाजे पर आये, उसे रुपया-पैसा न देकर भोजन दें।

12. मीठा बोलो, सभी प्यार करेंगे

एक कौआ था। वह जहाँ बोलता था बच्चे-बूढ़े सब मिलकर

उसे पत्थर मारते थे। एक दिन कौए को गुस्सा आ गया। उसने सोचा, मुझे यह देश छोड़कर विदेश चले जाना चाहिए क्योंकि यहाँ के लोग मुझे पत्थर मारते हैं।

वह विदेश के लिए रवाना हो गया। रास्ते में उसे एक कोयल मिली। कोयल ने कौए से पूछा- मामा ! कहाँ जा रहे हो ? कौए ने कहा- बहिन ! मैं विदेश जा रहा हूँ। यहाँ के लोग बहुत दुष्ट, निर्दय हैं। मैं जैसे ही बोलता हूँ वे मुझे पत्थर मारते हैं इसलिए मुझे जल्दी विदेश जाने दो।

कोयल ने कहा- मामा ! तुम विदेश भी चले जाओगे और वहाँ पर भी यदि तुम कड़वा- कठोर, चिड़चिड़ाकर और चिल्लाकर ही बोलोगे तो वहाँ पर भी लोग तुम्हें पत्थर मारेंगे। इसलिए तुम विदेश नहीं जाओ, यहीं रहो और अपनी भाषा / बोली में मिठास लाओ।

मीठा और प्रेम से बोलो, सभी तुमसे प्यार करेंगे, देखो मुझे तो कोई पत्थर नहीं मारता है।

सारांश : कठोर-कड़वा बोलने वाले को सभी नापसन्द करते हैं इसलिए मीठा-मधुर, प्रेमभरा प्रेमपूर्वक बोलना चाहिए।

13. सेवा और श्रम की महिमा

एक बार एक गुरुजी ने अपने शिष्यों से कहा- कोई अपने पवित्र हाथों से मेरे लिए एक गिलास पानी ले आओ। एक शिष्य तत्काल चाँदी के गिलास में पानी ले आया। गुरु गिलास लेते हुए शिष्य की हथेली की ओर देखकर बोले- बेटा! तुम्हारे हाथ तो बहुत

Scanned by CamScanner

कोमल हैं। शिष्य ने कहा हाँ, गुरुदेव! मेरे घर पर बहुत सारे नौकर हैं जो पूरा काम कर देते हैं इसलिए मुझे कुछ भी काम नहीं करना पड़ता है।

गुरु गिलास को ओठों से लगाने वाले थे कि उनका हाथ रुक गया। वे गम्भीरता से बोले- जिन हाथों ने कभी सेवा और श्रम नहीं किया वे हाथ पवित्र कैसे हो सकते हैं इसलिए मैं तुम्हारे हाथ का पानी नहीं पी सकता। इस बात को सुन शिष्य को बहुत दुःख हुआ। उसने उसी दिन से दुखियों की सेवा करना और श्रम करना शुरू कर दिया।

सारांश : हमेशा दुखियों की सेवा एवं श्रम करते रहने से शरीर और स्वास्थ्य दोनों अच्छे रहते हैं।

14. गुरुभक्ति

एक दिन कर्ण के गुरु बहुत थक गये थे। कर्ण ने उनकी थकान देखकर अपनी गोदी में उनका सिर रख लिया। थोड़ी ही देर में उनकी नींद लग गई। कर्ण उनके गुणों का चिन्तन कर रहा था तभी एक विषकीट (विषैला कीड़ा) आसन के नीचे आकर बैठ गया और कर्ण के शरीर को कुतर-कुतर कर खाने लगा। कर्ण को बहुत तकलीफ होने लगी। वह सोचने लगा, ''क्या करूँ ? कीड़े को कैसे हटाऊँ, पाँव हटाये बिना यह कीड़ा नहीं हट सकता और पाँव हिलाने पर गुरुजी की नींद खुल जाएगी। गुरु जी की कच्ची नींद नहीं तोड़ूंगा। चाहे वह शरीर का रक्त पी ले।

कर्ण अचल आसन से बैठा रहा, मुँह से आह तक नहीं

निकाली। किन्तु जब खून की गर्म-गर्म धारा का गुरु जी के शरीर से स्पर्श हुआ तो उनकी नींद खुल गयी। तब गुरु जी की आज्ञा से उसने कीड़े को हटाया।''

सारांश : गुरु के प्रति इतना अद्‌भुत समर्पण होने से कर्ण मरने के बाद भी आज जीवित है अतः समर्पित भाव से गुरु-भक्ति में तत्पर रहना चाहिए।

15. ईश्वर देख रहा है

एक लकड़हारा था। उसके एक ही पुत्र था। एक दिन उसने अपने बेटे से किसी दूसरे के बगीचे से आम चुरा कर लाने को कहा। लड़का जब जाने लगा तब पिता ने उससे कहा, आम तोड़ने से पहले तुम इधर-उधर देख लेना के कोई देख तो नहीं रहा है।

पिता की बात को ध्यान में रखते हुए लड़का बगीचे में जा पहुँचा। वहाँ पहुँच कर उसने नजर घुमाकर चारों ओर देखा कि वहाँ कोई नहीं था। लेकिन जैसे ही वह आम तोड़ने लगा अचानक उसे अपने शिक्षक द्वारा बताई गई शिक्षा याद आ गई कि ईश्वर हर जगह रहता है। मनुष्य सभी से छिप सकता है। लेकिन भगवान की नजरों को धोखा नहीं दे सकता। अतः वह बिना आम तोड़े ही वापस पिता के पास आ गया।

पिता द्वारा आम न लाने की वजह पूछने पर उसने कहा कि कोई देख रहा था। इसी तरह उसके पिता ने 2-3 बार उसे आम लाने के लिये भेजा लेकिन वह बिना आम लिये ही हर बार वापस आकर यही कहता कि कोई देख रहा था।

Scanned by CamScanner

तब उसके पिता ने कहा, अच्छा, ठीक है। इस बार मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ। उसका पिता बाहर खड़ा देखता रहा। लड़का बगीचे में घुसा और थोड़ी देर बाद वापस आ गया।

पिता ने कहा इस समय तो कोई नहीं देख रहा था। तुमने आम क्यों नहीं तोड़े।

इस पर लड़का बोला, पिता जी, ईश्वर देख रहा था।

यह सुनकर उसके पिता लज्जित होकर चुप हो गये।

अपने बेटे से ही उन्हें शिक्षा मिली कि ईश्वर हर जगह है, वह सब कुछ देखता है। हम हर किसी से छिपा सकते हैं लेकिन ईश्वर से कुछ नहीं छिपा सकते।

16. मांस खाने से नरक दुःख

किसी समय पाँचों पाण्डव माता कुंती सहित श्रुतपुर नगर में एक वणिक के यहाँ ठहर गये। रात्रि में उसकी स्त्री का करुण क्रंदन सुनकर माता कुंती ने कारण पूछा। उसने कहा- माता इस नगर का बक नामक राजा मनुष्य का मांस खाने लगा था, तब लोगों ने उसे राज्य से हटा दिया। तब भी वह वन में रहकर मनुष्यों को मार मारकर खाने लगा। तब लोगों ने यह निर्णय किया कि प्रतिदिन बारी-बारी से एक-एक घर से एक-एक मनुष्य को देना चाहिए। दुर्भाग्य से आज मेरे घर की बारी है। इतना सुनकर कुंती ने भीम को सारी घटना सुनाई।

प्रातःकाल में भीम ने उसके लड़के के बारी में पहुँच कर उस

बक राजा के साथ भयंकर युद्ध करके उसे समाप्त कर दिया। वह मरकर सातवें नरक चला गया जो कि वहाँ पर आज तक दुःख उठा रहा है।

17. सत्य बोलने से लाभ

सेठ शांतिलाल करोड़पति थे। वे कभी झूठ नहीं बोलते थे। इसी कारण उनकी सम्पत्ति और प्रतिष्ठा दिनोंदिन बढ़ती जा रही थी। एक दिन वे जहाज में माल लाद कर ला रहे थे कि अचानक एक डाकू दल ने उनको घेरकर पूरे जहाज का माल लूट लिया और डाकुओं का मुखिया सेठ से बोला- ''सेठ जी ! अब आपके पास क्या है ?'' सेठ ने कहा-''बस अब मेरे पास कुछ नहीं है''डाकू माल लेकर रवाना हो गये, तभी सेठ की दृष्टि अपनी अंगुली में पहनी अंगूठी पर गई, जिसकी कीमत कम-से-कम पचास हजार रुपये थी।

सेठ ने जल्दी से डाकू को पुकारा- ''शेरसिंह, भैया! थोड़ा रुको, मेरी भूल हो गई। मुझे घबराहट में ध्यान नहीं रहा। मैं झूठ बोल गया कि मेरे पास कुछ नहीं है, किन्तु मेरे पास एक अंगूठी और है, इसे भी लेते जाओ।'' डाकू लौट आया। उससे अंगूठी ले ली और जाने लगा। लेकिन तभी उसके मन में विचार आया कि मैं इतने सत्यवादी सेठ को लूट कर जा रहा हूँ। क्या इसकी यह सम्पत्ति मुझे पच जायेगी ? नहीं, यह तो बहुत बड़ा पाप है, कहाँ यह निर्लोभी सेठ जो मुझे बुलाकर अपने असत्य का प्रायश्चित्त कर रहा है और कहाँ मैं दूसरों की हत्याएँ कर, चोरी करके भी प्रायश्चित्त/पश्चाताप नहीं कर रहा हूँ।

Scanned by CamScanner

धीरे-धीरे उसके विचार बदल गये, उसने डाकुओं को अपने विचार बताए। सबने सेठ के चरणों में अपने मस्तक झुका दिये। आजीवन चोरी और लूटने का त्याग कर सेठ की सम्पत्ति वापस कर दी।

सारांश: सत्यवादी के सामने चोर-डाकू तक झुक जाते हैं इसलिए हमेशा सत्य बोलना चाहिए।

18. दृढ़सूर्य चोर का मन्त्र मनन से उद्धार

एक दिन बसन्तोत्सव के समय धनपाल राजा की रानी बहुमूल्य हार पहनकर वनविहार के लिए जा रही थी, जब उसके हार पर बसन्तसेना वेश्या की दृष्टि पड़ी तब वह उस पर मोहित हो गयी। अपने प्रेमी दृढ़सूर्य से कहने लगी कि "इस हार के बिना तो मेरा जीवित रहना सम्भव नहीं। अतः किसी भी तरह हो, इस हार को ले आना चाहिए।"

दृढ़सूर्य राजमहल में गया और उस हार को चुराकर ज्यों ही निकला, त्यों ही पकड़ लिया गया। दृढ़सूर्य सूली पर लटकाया जा चुका था, पर अभी उसके शरीर में प्राण शेष थे। संयोगवश उसी मार्ग से धनदत्त सेठ जा रहा था। दृढ़सूर्य ने उससे पानी पिलाने को कहा। सेठ ने उत्तर दिया -"मेरे गुरुने मुझे णमोकार मन्त्र दिया है। अतः मैं जब तक पानी लाता हूँ, तब तक तुम इसे स्मरण करो।"

इस प्रकार दृढ़सूर्य को णमोकारमन्त्र सिखलाकर धनदत्त पानी लेने चला गया। दृढ़सूर्य ने णमोकारमन्त्र का जोर-जोर से उच्चारण आरम्भ किया। आयु पूर्ण होने से उस चोर का मरण हो गया और वह णमोकारमन्त्र के प्रभाव से सौधर्मस्वर्ग में देव हुआ।

19. प्रिय वचन

एक राजा, एक आँख वाला था, किन्तु वह बड़ा विवेकी एवं बुद्धिमान् था। उसने अपने राज्य के तीन श्रेष्ठ चित्रकारों को बुलाकर कहा कि-"तुम एक-एक सुंदर चित्र तैयार करो, जो चित्र मुझे पसंद आयेगा, उस चित्रकार को भारी पुरुस्कार दिया जायेगा।" चित्रकारों ने अपने-अपने चित्र बनाकर तैयार कर दिये। निर्धारित समय पर राजा अपने मंत्रियों के साथ चित्र देखने पहुँचा।

पहले वाले चित्रकार ने राजा को दोनों आँख वाला चित्र में दिखलाया। दूसरे चित्रकार ने राजा को हू-ब-हू (ज्यों का त्यों) अर्थात् एक आँख वाला दिखलाया। किन्तु तीसरे चित्रकार ने राजा को पराक्रम की मुद्रा में निशाना साधते हुये दर्शाया।

पहले वाले चित्र को देखकर राजा ने कहा कि-"चित्र असत्य है किन्तु प्रिय है।" दूसरे वाले चित्र को देखकर राजा ने कहा कि-"चित्र सत्य है किन्तु अप्रिय है।" तीसरे चित्र को देखकर राजा ने उसकी प्रशंसा करते हुये कहा कि-"इस चित्रकार का चित्र सत्य भी है और प्रिय भी है, क्योंकि उसमें निशाना साधते हुये राजा को एक आँख वाला दर्शाया है।

तीर के छोर से निशाना साधते हुये जिसमें राजा की कानी आँख दब गई है अर्थात् बंद है। इस तरह उसने राजा की ज्यों की त्यों मुद्रा को दर्शाया है तथा देखने में भी अप्रिय नहीं है।" इस तरह तीसरे चित्रकार को राजा ने श्रेष्ठ चित्रकार घोषित करते हुये भारी इनाम दिया।

अतः सही कहा है कि सत्य ऐसा होना चाहिये जो कि सत्य भी हो, साथ ही प्रिय भी।

Scanned by CamScanner

[खण्ड-3]

20. स्वार्थी भूखे रहे

एक बार एक राजा ने देवता (निःस्वार्थी) और राक्षस (स्वार्थी) मनुष्यों को भोजन के लिए निमन्त्रण दिया और उनकी परीक्षा के लिए भोजन के पहले उनके हाथो को इस ढंग से बँधवा दिया कि वे भोजन अपने मुँह में न रख पायें और उनके सामने षट् रस मिश्रित भोजन परोस दिया।

स्वार्थी राक्षस जैसे लोग अपने भोजन की चिंता में और हाथ बँधे होने के कारण कुछ नहीं खा पाये, सोचते ही रह गये कि हम भोजन कैसे करें। लेकिन जो देवता के समान परोपकारी थे वे अपनी चिंता छोड़कर अपनी थालियों में से भोजन ले-लेकर सामने वाले देवताओं को खिलाने लग गये। दूसरों को खिलाने से दूसरों ने भी उनको खिलाना प्रारम्भ कर दिया। फलतः परोपकार करने से दोनों का पेट भर गया और राक्षस वृत्ति वाले लोग भूखे ही गये।

सारांश : परोपकार करने वाला कभी भूखा नहीं रहता इसलिए हमेशा दूसरों को खिलाकर खाना चाहिए।

21. लालच का फल

एक चतुर हलवाई किसी सेठ के यहाँ से दावतों में काम आने वाले चाँदी के बर्तन किराये पर ले जाया करता था और काम हो जाने पर नियत समय पर लौटा देता था।

एक बार जब वह बर्तन लौटाने आया तो दस छोटे बर्तन अलग से देकर कहा कि आपके बर्तनों ने बच्चे दिये हैं। बर्तन आपके

तो बच्चे भी आपके। इन्हें रख लें।

मुफ्त की आमदानी सेठ को भी बुरी न लगी। उसने बढ़े हुए बर्तन रख लिये और कहा प्रसन्न होकर कहा कि आपको जितने बर्तनों की जरुरत हुआ करे तो निःसंकोच ले जाया कीजिये।

कुछ दिन तो ऐसा ही व्यवहार चलता रहा। एक दिन हलवाई ने बड़ी दावत की सूचना दी और सारे बर्तन देने के लिये सेठ से आग्रह किया। बच्चों के लोभ में सेठ ने सारे बर्तन निकाल कर दे दिये।

बर्तन लेकर हलवाई चुप बैठ गया। कहाँ तो वह पहले अपने आप बर्तन लौटा जाता था, पर अब तकाजे करने पर भी नहीं लौटा रहा था। अतः एक दिन सेठ जी उसके घर स्वयं गये और बर्तन माँगे। हलवाई ने चेहरे को दुखी बनाते हुए कहा कि बर्तन तो सभी मर गये। मैं किस मुँह से आपके पास आता?

इस पर काफी कहा सुनी हुई और आसपास के लोग इकट्ठे हो गये। उन्हें जब सही बात का पता चला तो वे भी हलवाई का पक्ष लेकर एक मुँह से कहने लगे। जो बर्तन बच्चे दे सकते हैं, वे क्या मर नहीं सकते ?

अतः हमें समझना चाहिये कि यदि कोई व्यक्ति वस्तु मुफ्त में दे रहा है तो उसे नहीं लेना चाहिये।

22. वेश्या सेवन

चम्पापुर के भानुदत्त सेठ और भार्या देविला के पुत्र का नाम चारुदत्त था। वह सदैव धार्मिक पुस्तकों को पढ़ने में अपना समय

Scanned by CamScanner

व्यतीत करता रहता था। वहीं के सेठ सिद्धार्थ ने अपनी पुत्री मित्रवती का विवाह चारुदत्त के साथ कर दिया किन्तु चारुदत्त अपने पढ़ने लिखने में इतना मस्त था कि अपनी पत्नि के पास बहुत दिनों तक गया ही नहीं।

तब चारुदत्त का चाचा रुद्रदत्त अपनी भावज की प्रेरणा से उसे गृहस्थ आश्रम में फंसाने हेतु एक बार वेश्या के यहाँ ले गया और उसे चौपड़ खेलने के बहाने वहीं छोड़कर चला गया।

उधर चारुदत्त ने बसंतसेना वेश्या में बुरी तरह फंसकर कई करोड़ की सम्पत्ति समाप्त करके घर भी गिरवी रख दिया। अंत में बसंतसेना वेश्या की माता ने चारुदत्त को धन रहित जानकर रात्रि में सोते समय उसको बांधकर संडास में डाल दिया। सुबह नौकरों ने देखा कि सूकर उसका मुख चाट रहे हैं तब संडास से निकालकर उसकी घटना सुनकर सब उसे धिक्कारने लगे।

23. शिकार करना

उज्जयिनी नगरी के राजा ब्रह्मदत्त शिकार खेलने के बड़े शौकीन थे। एक दिन वन में ध्यानारुढ़ दया मूर्ति मुनिराज के निमित्त से उन्हें शिकार का लाभ नहीं हुआ। दूसरे दिन भी ऐसे ही शिकार न मिलने से राजा क्रोधित हो गया और जब मुनिराज आहार चर्या के लिये गये तब उसने बैठने की पत्थर की शिला को अग्नि से तपाकर खूब गरम कर दिया।

मुनिराज आहार करके आये और उसी पर बैठ गये। उसी समय अग्नि सदृश गरम शिला से उपसर्ग समझ कर उन्होंने चारों

प्रकार के आहार का त्याग कर दिया। उस गरम शिला से मुनिराज को असहाय वेदना हुई फिर भी वे आत्मा को शरीर से भिन्न समझ कर ध्यानाग्नि द्वारा अष्टकर्मों का नाश करके अन्तकृत केवली हो गये अर्थात् 48 मिनिट में ही केवली होकर मोक्ष चले गये।

इधर सात दिन के भीतर ही राजा को भयंकर कुष्ट रोग हो गया और अग्नि से जलकर वह मरा और सातवें नरक में चला गया। वहाँ से निकल कर तिर्यंच गति के दुःखों को भोगकर पुनः नरक चला गया। देखो, शिकार खेलने के कारण ब्रह्मदत्त को नरक जाना पड़ा।

24. चोरी करना

बनारस में शिवभूति ब्राह्मण था। उसने अपनी जनेऊ में कैंची बांध ली थी और कहता था कि यदि मेरी जिह्वा झूठ बोल दे तो मैं उसी क्षण उसे काट डालूं इसलिये उसका नाम सत्यघोष पड़ गया।

एक बार सेठ धनपाल पाँच-पाँच करोड़ के चार रत्न उसके पास रखकर व्यापार करने चला गया। जहाज डूबने से बेचारा निर्धन हो गया। सत्यघोष के पास अपने रत्न मांगने आया तो सत्यघोष ने उसे पागल कहकर निकलवा दिया।

छह महीने तक उस सेठ को रोते चिल्लाते देखकर रानी ने युक्ति पूर्वक उसके रत्न वहाँ से मंगवा लिये। राजा ने सत्य घोष के लिये तीन दण्ड कहे।

1. गोबर खाना 2. मल्लों के मुक्के खाना 3. सब धन देना।

क्रम से वह लोभी तीनों दण्ड भोगकर राजा के भण्डार में सर्प हो गया तथा कालान्तर में अनेकों कष्ट उठाये।

Scanned by CamScanner

25. परस्त्री सेवन

एक समय श्री रामचन्द्र जी, सीता जी व लक्ष्मण जी के साथ दण्डक वन में ठहरे हुये थे। वहाँ पर खरदूषण के साथ युद्ध में रावण जा रहा था, रास्ते में रावण ने वहाँ सीता को देखा उसके ऊपर मुग्ध होकर युक्ति से उसका हरण कर लिया।

सभी के समझाने पर भी जब वह नहीं माना, तब रामचन्द्र ने लक्ष्मण को साथ लेकर अनेकों विद्याधरों की सहायता से रावण से युद्ध ठान लिया। बहुत ही भयंकर युद्ध हुआ। अन्त में रावण ने अपने चक्ररत्न को लक्ष्मण पर चला दिया।

वह चक्ररत्न लक्ष्मण की प्रदक्षिणा देकर उनके हाथ में आ गया। लक्ष्मण ने उस समय भी रावण से कहा कि तुम सीता जी को वापस कर दो। रावण नहीं माना तब लक्ष्मण ने चक्ररत्न से रावण का सिर काट डाला। वह मरकर नरक में गया। वहाँ आजतक असंख्य दुःखों को भोग रहा है।

26. मान से मर गया

एक कुम्भकार के दो गधे एक रस्सी से बँधे थे। एक दिन कुम्भकार ने उनके सामने एक-एक टोकरा भूसा खाने को रखा, लेकिन उसे ध्यान नहीं रहा इसलिए उसने घास के टोकरे थोड़े-थोड़े दूर रख दिये। जब उन्होंने भूसा खाने के लिए अपने मुँह टोकरों की तरफ बढ़ाये तो उनके मुँह टोकरे तक नहीं पहुँच पाये।

तब भूख से पीड़ित हो एक गधे ने दूसरे से कहा- भैया! थोड़ा इधर खिसक जाओ मैं अपने टोकरे की घास खा लेता हूँ फिर

तुम अपने टोकरे की खा लेना। दूसरे गधे ने कहा- क्यों, पहले तुम इधर खिसको। मैं पहले अपने टोकरे का भूसा खाऊँगा। कुछ क्षण दोनों चुप रहे। कुछ देर बाद पहले गधे ने फिर कहा- भैय्या! तुम इधर आ जाओ, पहले हम दोनों मेरे टोकरे की घास खा लेते हैं, फिर तुम्हारे टोकरे की खा लेंगे।

दूसरे ने कहा- क्यों, पहले मेरे टोकरे की खायेंगे..... । दोनों फिर चुप हो गये। फिर थोड़ी देर के बाद पहले गधे ने कहा- ठीक है, ऐसा करें कि अपन दोनों अपनी-अपनी शक्ति अजमायेंगे। जो दूसरे को अपनी तरफ खींच लेगा, उसके टोकरे की पहले खायेंगे और दूसरे की बाद में। दोनों ने अपनी-अपनी ताकत लगाई। एक रस्सी से बँधे होने के कारण दोनों के गले का फंदा खिंच गया। दोनों धराशायी हो गये।

यदि दोनों में से एक भी दूसरे की बात मान लेता, झुक जाता तो दोनों ही मौत के मुँह में नहीं जाते और आज अभिमानियों के उदाहरण रूप से प्रसिद्ध नहीं होते।

सारांशः अभिमान में डूबकर दूसरे की बातों को सर्वथा नकारना नहीं चाहिए अपितु एक-दूसरे के विचारों का सामंजस्य बिठाकर अच्छा कार्य करना चाहिए।

27. गुस्से की अचूक दवा

एक सास-बहु की हमेशा लड़ाई होती रहती थी। दोनों को एक-दूसरे से ज्यादा गुस्सा आता था। बहू सास से बहुत परेशान थी तो बहू से सास भी परेशान थी। एक दिन बहू ने सोचा, वैद्यों के पास शायद गुस्से की कोई दवाई मिल जावे। वह एक वैद्य के पास पहुँची।

Scanned by CamScanner

वैद्य संत के रूप में दु:खियों का इलाज करता था। उसने वैद्य से कहा- ''वैद्यजी ! मुझे बहुत गुस्सा आता है। आप ऐसी कोई दवाई दे दो, जिससे मेरा गुस्सा समाप्त हो जावे।'' वैद्य ने गुस्से का कारण, समय (कितनी देर तक आता है) तथा उसमें होने वाली प्रक्रिया आदि सब पूछकर एक बॉटल दे दी और बोले- ''देखो, जब तुम्हें गुस्सा आवे इसमें से एक-दो घूंट मुँह में भर लेना एवं 15-20 मिनट के बाद जब उसमें मुँह की लार मिल जावे, गले उतार लेना। यदि 15-20 मिनट मुँह में भरकर नहीं रखोगी तो दवाई काम नहीं करेगी।''

बहू ने बॉटल ले ली और घर जाकर जैसे ही गुस्सा आया एक-दो घूंट मुँह में भर लिया। सास गुस्से में यद्वा-तद्वा (मनमाना) बोले जा रही थी लेकिन बहू के मुँह मे दवाई गले नहीं उतारनी थी तब तक (15-20 मिनट में) सास का गुस्सा शान्त हो गया था क्योंकि बहू ने उसकी बातों का कोई उत्तर नहीं दिया था।

इस प्रकार दवाई के प्रयोग से 4-5 दिन में घर का लड़ाई-झगड़ा बन्द हो गया। सच है अकेला व्यक्ति कभी लड़ नहीं सकता और बहू को बोलना नहीं था। वह दवाई कुछ नहीं थी, गुस्से के समय मौन रखने के लिए वैद्यजी ने बोतल में पानी भरकर दे दिया था।

सारांश : स्वयं को या और किसी को यदि गुस्सा आ रहा हो तो 15-20 मिनट मौन रख लेने से कभी लड़ाई नहीं होती है।

28. जल्दबाजी नहीं करना

महाकवि भारवि के काव्यसृजन की सफलता की चर्चा चारों

ओर फैली हुई थी लेकिन कवि के मन में यह टीस थी कि उनके पिता ने उसके काव्य की कभी प्रशंसा नहीं की। एक दिन वे इस बात से क्रोधित होकर पिता को मारने की सोच रहे थे तभी वहाँ उनके माता-पिता आ पहुँचे। उन्हें देख कवि एक ओर छिप गये। माता-पिता को इसका कुछ भी पता नहीं चला।

माता-पिता आकाश में फैली चाँदनी का आनन्द ले रहे थे। पिता ने कहा- ''आज की चाँदनी ऐसी फैली रही है मानों मेरे प्यारे पुत्र की काव्य- कीर्ति ही फैल रही हो।'' यह सुन माँ चौंकी और बोली- ''जब आप यह मानकर चलते हैं कि भारवि का काव्य बहुत ही उत्तम-कोटि का है तो उसके सामने उसकी प्रशंसा न करके निन्दा क्यों करते हैं ?'' पिता बोले- ''भोली! यह सब दिखावटी निन्दा है, नजर (दृष्टिदोष) न लग जावे। क्या माता अपने पुत्र के माथे पर काला टीका नहीं लगाती है ? मैं भी उसकी निन्दा इसलिए करता हूँ कि उसे अपनी कला का अहं न हो जावे। यदि वह अहं में अकड़ जावेगा तो आगे नहीं बढ़ सकेगा।'' यह सुन भारवि सन्न रह गये। उन्होंने पिता के चरणों में गिरकर सारी बात कह डाली और प्रायश्चित्त किया।

सारांश: गलत-फहमी में पड़कर बिना सोचे-समझे कुछ भी काम नहीं करना चाहिए। यदि भारवि जल्दबाजी में पिता को मार देता तो न कीर्ति रहती और न काव्यसृजन की क्षमता और अगला भव भी बिगड़ जाता।

Scanned by CamScanner

29. त्याग की महिमा

1. बादल त्याग करता है(पानी बरसाता है) तभी ऊपर रहता है। समुद्र संग्रह करता है इसलिये नीचे रहता है।

2. बादल त्याग के कारण ही सर्वत्र विचरण करता है। (स्वतंत्र है) समुद्र संग्रह के कारण ही जड़ है। एक स्थान पर ही रहता है।

3. कूप जल देता है तब नया-नया जल पा लेता है। जिस कूप का जल नहीं निकाला जाता वह सड़ जाता है।

4. फूल अपना सौरभ लुटाता है तभी जन-जन उसे प्यार करते हैं। वहीं फूल देवताओं के चरणों में चढ़ाकर भक्त अपनी कामना करता है।

30. अभयदान का फल

एक गाँव में एक कुम्हार और नाई ने मिलकर एक धर्मशाला बनवाई। कुम्हार ने एक दिन एक मुनिराज को लाकर धर्मशाला में ठहरा दिया। तब नाई ने दूसरे दिन मुनि को निकालकर एक सन्यासी को लाकर ठहरा दिया। इस निमित्त से दोनों लड़कर मरे और कुम्हार का जीव सूकर हो गया तथा नाई का जीव व्याघ्र हो गया।

एक बार जंगल की गुफा में मुनिराज विराजमान थे। पूर्व संस्कार से यह व्याघ्र उन्हें खाने को आया और सूकर ने उन्हें बचाना चाहा। दोनों लड़ते हुए मर गये। सूकर के भाव मुनिरक्षा के थे अतः वह मरकर देवगति को प्राप्त हो गया और व्याघ्र हिंसा के भाव से मरकर नरक में चला गया। देखो ! वसतिदान के माहात्म्य से सूकर ने

स्वर्ग प्राप्त कर लिया।

31. जुआ व्यसन से दुर्दशा

हस्तिनापुर के राजा धृतराज के धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर ये तीन पुत्र थे। धृतराष्ट्र के दुर्योधन आदि सौ पुत्र हुए और पाण्डु के युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव ये पाँच पुत्र हुये। दुर्योधन आदि कौरव तथा युधिष्ठिर आदि पाण्डव कहलाते थे। ये सब शामिल ही राज्य करते थे।

कुछ दिन बाद कौरवों की पाण्डवों के प्रति ईर्ष्या देखकर भीष्म पितामह आदि बुजुर्गों ने कौरवों और पाण्डवों में आधा आधा राज्य बांट दिया किन्तु इस पर दुर्योधन आदि कौरव अशांति ही किया करते थे।

किसी समय कौरव और पाण्डव जुआ खेलने लगे उस समय दैव वश दुर्योधन से युधिष्ठिर हार गये यहाँ तक कि अपना राज्य तक जुए में हार गए। तब दुर्योधन ने दुष्टता वश बारह वर्ष तक उन्हें वन में घूमने का आदेश दे दिया और दुःशासन ने द्रौपदी की चोटी पकड़कर घसीटकर भारी अपमान किया किंतु शील शिरोमणि द्रौपदी का वह कुछ भी बिगाड़ न सका। पाँचों पाण्डव द्रौपदी को साथ लेकर बाहर वर्षों तक इधर उधर घूमें और बहुत ही कष्ट उठाये। इसलिये जुआ खेलना महापाप है।

Scanned by CamScanner

[खण्ड-4]

32. महासती अत्तीमव्वे

चालुक्य वंश के महादण्डनायक वीर नागदेव की पत्नी थी। एक बार नागदेव युद्ध करते हुए शत्रु को खदेड़ते हुए उसे गोदावरी के उस पार तक ले गये थे। पीछे से गोदावरी में भयंकर बाढ़ आ गयी। डर यह था कि शत्रु को यदि बाढ़ का पता लग गया तो वह नागदेव को पीछे खदेड़ देगा और सब नदी में डूबकर मरण को प्राप्त हो जायेंगे।

यह भी समाचार आया कि नागदेव जीत तो गये हैं पर अर्द्धमृत से हो गये हैं। सती अत्तीमव्वे उनको अपने खेमे में लाना चाहती थी। परन्तु नदी के उफान के कारण मजबूर थी। वह अचानक तेजी से निकली और नदी के किनारे खड़े होकर कहने लगी कि यदि मैं पक्की जिनभक्त और अखण्ड पतिव्रता होऊँ तो हे गोदावरी नदी! मैं तुझे आज्ञा देती हूँ कि तेरा प्रवाह उतने समय के लिए रुक जाए जब तक हमारे परिवारी जन इस पार नहीं आ जाते।

तुरंत ही नदी का प्रवाह घट गया और स्थिर हो गया। वह गई और अपने पति को ले तो आई पर बचा न सकी। शेष जीवन उसने उदासीन धर्मात्मा श्राविका के रूप में घर में बिताया। उसने स्वर्ण एवं रत्नों की 1500 जिन प्रतिमाएँ बनवाकर विभिन्न मंदिरों में विराजमान कीं। महाकवि पोन्न के शांतिपुराण की कन्नड़ भाषा में 1000 प्रतियाँ लिखाकर शास्त्र भण्डारों में वितरित कीं। निरंतर दान देने के कारण उसे 'दान चिंतामणि' कहा जाता था। उपर्युक्त कथा

शिलालेख से प्रमाणित है।

सारांश : जिनभक्ति एवं उत्तमदान से हर कार्य आसान हो जाता है। अतः भक्ति एवं दान हमेशा शक्ति अनुसार करते रहना चाहिये।

33. महारानी शान्तलादेवी

महाराज विष्णुवर्द्धन पोयसल की पट्टमहिषी थीं। राजा की लक्ष्मीदेवी आदि अन्य कई रानियाँ थीं, जिन सबमें प्रधान एवं ज्येष्ठ होने के कारण यह पट्टमहादेवी कहलाती थीं। क्योंकि राजा की अन्य सपत्नियों को यह नियंत्रण में रखती थीं। अपनी सुन्दरता एवं संगीत, वाद्य, नृत्य आदि कलाओं में निपुणता के लिये वह विदुषीरत्न सर्वत्र विख्यात थीं।

महारानी शान्तिदेवी बड़ी जिनभक्त और धर्मपरायण थीं। सन् 1122 में श्रवणबेलगोला में अपने नाम पर अत्यन्त सुन्दर एवं विशाल जिनालय बनवाया था। इस जिनालय में भगवान शान्तिनाथ की पाँच फुट ऊँची एवं कलापूर्ण प्रभा युक्त मनोज्ञ प्रतिमा प्रतिष्ठापित की थी। महारानी ने 1123 ई. में जिनाभिषेक के लिये वहाँ गंग-समुद्र नाम के सुन्दर सरोवर आदि के लिये राजा की प्रसन्नता से प्राप्त एक ग्राम स्वगुरु को भेंट किया था। सन् 1028 की चैत्र शुक्ल पंचमी सोमवार के दिन महाप्रतापी विष्णुवर्धन होयसल की इस प्रिय पट्ट-महादेवी महारानी शान्तलादेवी ने शिवगंगे नामक स्थान में, सम्भवतया अपने गुरु की उपस्थिति में, धर्मध्यान पूर्वक स्वर्गगमन किया।

सारांश : हमें अपने धन का सदुपयोग करना चाहिये।

Scanned by CamScanner

34. पाप का मूल कारण परिग्रह

एक बार दो भाई धन कमाने के लिए परदेश गये। वहाँ दोनों ने मिलकर बहुत धन कमाया। वे दोनों धन लेकर घर आ रहे थे। रास्ते में बड़े भाई के मन में पाप आ गया। उसने सोचा-यदि मैं छोटे भाई को मार दूँ तो पूरा धन मुझे मिल जायेगा। बड़ा भाई इस प्रकार विचार कर रात्रि में सो गया।

छोटा भाई जाग रहा था। उसके मन में भी वैसे ही भाव उत्पन्न हुए जैसे बड़े भाई के हुए थे लेकिन कुछ ही देर में उसकी बुद्धि पलट गई, वह अपने को धिक्कारने लगा। उसे अपने आप पर बहुत क्रोध आया। उसने पूरा धन जो सिक्कों के रूप में था नदी में बहा दिया।

सिक्कों के गिरने की आवाज सुनकर बड़े भाई की नींद खुल गई, उसने उठकर पूछा "भैया! तुमने यह क्या किया ?" छोटे भाई ने कहा- "भैया! इन धन के कारण मेरे भाव बिगड़ गये, मेरे भाव तुम्हें मारने के हो गये अतः मैंने पूरे सिक्के (धन) नदी में फेंक दिये।" बड़े भाई ने कहा- "भाई! तुमने बहुत अच्छा किया क्योंकि मेरे भी इस धन के कारण ऐसे ही भाव बिगड़ गये थे।"

सारांश : बहुत धन इकट्ठा नहीं करना चाहिए। धन आने पर दान-परोपकार आदि पुण्य कार्यों में खर्च कर देना चाहिए। क्योंकि परिग्रह के होने पर भाव खराब होने लगते हैं; नैतिकता, सदाचार समाप्त होने लगता है।

35. मायाचारी मुख से प्रकटी

एक राजा और मंत्री वनविहार के लिए जा रहे थे। घोड़े की तेज रफ्तार के कारण राजा जंगल में भटक गया, जहाँ केवल भयंकर पशुओं की आवाज सुनाई दे रही थी। वह अपनी भूख मिटाने के लिए इधर-उधर देखने लगा। उसे घूमते-घूमते एक वृक्ष दिखा। जिसमें मात्र एक सेवफल दिखाई दे रहा था। उसने भगवान से प्रार्थना की, हे भगवान! यह सेवफल गिर जावे तो मेरी भूख और प्यास दोनों शान्त हो जाएँ। योग से सेवफल गिर गया लेकिन वह पतले गोबर में गिरा। राजा ने सोचा-बिना धोए कैसे खाऊँ ? लेकिन मैं यहाँ इस सेव को पोंछ कर खा भी लूंगा तो कौन देख रहा है, इस प्रकार मन को समझा-बुझा कर रूमाल से सेवफल को पोंछ कर खा लिया। उसको उसी दिन से मन में भय लग रहा था कि किसी ने देख लिया होगा तो क्या होगा ? वह क्या कहेगा ? वह कहीं सबको, किसी को कह न दे, आदि.....।

एक दिन एक नट-नटनी नृत्य करने आये। उन्होने गीत गाया। गीत के बोल थे-"मैं कह दूँगी ललना की बतिया।" इस पंक्ति को सुनकर राजा ने सोचा शायद इस नट ने मुझे सेबफल खाते हुए देख लिया है। इसलिए उसे रोकन के लिए अपना हार उतार कर दे दिया। नट-नटनी ने सोचा, राजा को यह गीत बहुत पसन्द आया है तभी तो इतना मूल्यवान हार इनाम दिया है। वह पुनः वही गीत गाने लगा, राजा ने दो-तीन आभूषण और उतार कर दे दिये। लेकिन जब इतने पर भी नट ने वह गीत बन्द नहीं किया तो राजा ने गुस्से में कह दिया कि-"कह दो, क्या कहोगे यही कि राजा ने गोबर का सेवफल

Scanned by CamScanner

खाया।'' राजा ने छिपकर/छलकर सेवफल खाया था इसलिए सभा के बीच में स्वयं अपने मुँह से ही अपनी बात प्रकट कर दी।

सारांश : छिपकर या छलकर किया हुआ काम कभी गुप्त नहीं रह सकता, कभी-न-कभी प्रकट हो जाता है।

36. मित्रता कैसे बनी रहे

दो घनिष्ट मित्र थे। वे व्यापार-व्यवसाय के कारण अलग-अलग गाँव में रहने लगे थे। उन दोनों का व्यापार आदि के निमित्त से एक-दूसरे के यहाँ आना-जाना बना रहता था। एक दिन एक मित्र ने दूसरे मित्र को पत्र लिखा कि यदि लाल रंग का अंगोछा मिले तो सम्हाल कर रख लेना। अंगोछा ढूंढा पर नहीं मिला क्योंकि सर्दी के बिस्तरों को बाँध कर रख दिया था, उनको बिखेरने की जरूरत न समझकर समाचार दे दिये कि अंगोछा नहीं मिला है।

मित्र हमेशा की तरह मित्र के यहाँ आता-जाता रहा। दीपावली पर मकान की सफाई के समय बिस्तर धूप में डालें गये। उसमें अंगोछा मिला जिसमें दस हजार के नोट निकले। अंगोछा देखकर याद आया कि एक बार मित्र का पत्र आया था, उसने अंगोछा संभाल कर रखने के लिए कहा था।

मित्र शीघ्र ही मित्र के पास गया और उलाहना देते हुए बोला- ''आप भी खूब हैं, इतनी बड़ी रकम का जिक्र भी नहीं किया, सिर्फ अंगोछे के लिए लिख दिया और हमारे मना लिख देने पर कभी इशारा तक नहीं किया। कोई नौकर ले गया होता, चूहे कुतर गये होते तो जीवन भर हमारा मुँह काला रहता।''

मित्र हँसकर बोला- ''भाई जितनी बात लिखनी थी वह तो लिख दी। सोचा, समझ जाओगे। दो आने के अंगोछे के लिए दो पैसे का कार्ड कैसे खराब करता। मैं अपनी असावधानी के लिए तुम्हें क्यों परेशान करता।''

सारांश : मित्रता में मित्र के साथ कभी संदेह एवं धन का लोभ नहीं हो तो मित्रता जीवन पर्यन्त सुख और संतोष देने वाली होती है।

37. शिवभूति मुनिराज

किसी ग्राम में संसार, शरीर, भोगों से भयभीत एक शिवभूति नाम का पुरुष रहा करता था। नगर के निकट ही मुनि संघ को आया सुन वह उनके दर्शनार्थ पहुँचा। दर्शन के पश्चात् उसने आचार्य श्री से दुखों से मुक्ति का उपाय पूछा- तब आचार्य श्री बोले हे भव्य प्राणी यदि तुम दुखों से मुक्त होना चाहते हो तो श्रमणत्व / मुनित्व को अंगीकार करो। परम वैराग्य युक्त हो उसने मुनि दीक्षा ग्रहण की।

ज्ञान का क्षयोपशम कम होने के कारण गुरु जो भी पढ़ाते थे वह शीघ्र ही भूल जाते थे। अतः गुरु ने तुष मास भिन्नं इन अक्षरों का ही पाठ करने का उपदेश दिया। जिसे वे शिवभूति मुनिराज दिन-रात रटते थे। वे आत्मा को शरीर तथा कर्मों के समूह से भिन्न जानते। किन्तु शब्द ज्ञान उनके पास नहीं था। एक दिवस वे आहारचर्या को निकले किन्तु रास्ते में गुरु वाक्य भूल गये तथा देखा कि एक महिला दाल रूप परिणत उड़दों को पानी में डुबा कर तुसों (छिलकों) को पृथक् कर रही है। देखकर उन्होंने पूछा आप यह क्या कर रही हो ? उन्होंने बताया मैं दाल और छिलकों को पृथक् कर रही हूँ क्योंकि

Scanned by CamScanner

खाया।'' राजा ने छिपकर/छलकर सेवफल खाया था इसलिए सभा के बीच में स्वयं अपने मुँह से ही अपनी बात प्रकट कर दी।

सारांश : छिपकर या छलकर किया हुआ काम कभी गुप्त नहीं रह सकता, कभी-न-कभी प्रकट हो जाता है।

36. मित्रता कैसे बनी रहे

दो घनिष्ट मित्र थे। वे व्यापार-व्यवसाय के कारण अलग-अलग गाँव में रहने लगे थे। उन दोनों का व्यापार आदि के निमित्त से एक-दूसरे के यहाँ आना-जाना बना रहता था। एक दिन एक मित्र ने दूसरे मित्र को पत्र लिखा कि यदि लाल रंग का अंगोछा मिले तो सम्हाल कर रख लेना। अंगोछा ढूंढा पर नहीं मिला क्योंकि सर्दी के बिस्तरों को बाँध कर रख दिया था, उनको बिखेरने की जरूरत न समझकर समाचार दे दिये कि अंगोछा नहीं मिला है।

मित्र हमेशा की तरह मित्र के यहाँ आता-जाता रहा। दीपावली पर मकान की सफाई के समय बिस्तर धूप में डालें गये। उसमें अंगोछा मिला जिसमें दस हजार के नोट निकले। अंगोछा देखकर याद आया कि एक बार मित्र का पत्र आया था, उसने अंगोछा संभाल कर रखने के लिए कहा था।

मित्र शीघ्र ही मित्र के पास गया और उलाहना देते हुए बोला- ''आप भी खूब हैं, इतनी बड़ी रकम का जिक्र भी नहीं किया, सिर्फ अंगोछे के लिए लिख दिया और हमारे मना लिख देने पर कभी इशारा तक नहीं किया। कोई नौकर ले गया होता, चूहे कुतर गये होते तो जीवन भर हमारा मुँह काला रहता।''

मित्र हँसकर बोला- ''भाई जितनी बात लिखनी थी वह तो लिख दी। सोचा, समझ जाओगे। दो आने के अंगोछे के लिए दो पैसे का कार्ड कैसे खराब करता। मैं अपनी असावधानी के लिए तुम्हें क्यों परेशान करता।''

सारांश : मित्रता में मित्र के साथ कभी संदेह एवं धन का लोभ नहीं हो तो मित्रता जीवन पर्यन्त सुख और संतोष देने वाली होती है।

37. शिवभूति मुनिराज

किसी ग्राम में संसार, शरीर, भोगों से भयभीत एक शिवभूति नाम का पुरुष रहा करता था। नगर के निकट ही मुनि संघ को आया सुन वह उनके दर्शनार्थ पहुँचा। दर्शन के पश्चात् उसने आचार्य श्री से दुखों से मुक्ति का उपाय पूछा- तब आचार्य श्री बोले हे भव्य प्राणी यदि तुम दुखों से मुक्त होना चाहते हो तो श्रमणत्व / मुनित्व को अंगीकार करो। परम वैराग्य युक्त हो उसने मुनि दीक्षा ग्रहण की।

ज्ञान का क्षयोपशम कम होने के कारण गुरु जो भी पढ़ाते थे वह शीघ्र ही भूल जाते थे। अतः गुरु ने तुष मास भिन्नं इन अक्षरों का ही पाठ करने का उपदेश दिया। जिसे वे शिवभूति मुनिराज दिन-रात रटते थे। वे आत्मा को शरीर तथा कर्मों के समूह से भिन्न जानते। किन्तु शब्द ज्ञान उनके पास नहीं था। एक दिवस वे आहारचर्या को निकले किन्तु रास्ते में गुरु वाक्य भूल गये तथा देखा कि एक महिला दाल रूप परिणत उड़दों को पानी में डुबा कर तुसों (छिलकों) को पृथक् कर रही है। देखकर उन्होंने पूछा आप यह क्या कर रही हो ? उन्होंने बताया मैं दाल और छिलकों को पृथक् कर रही हूँ क्योंकि

Scanned by CamScanner

दाल पृथक् है और छिलका पृथक् है। इतना सुनते ही बोध हो गया। इसी प्रकार मेरी आत्मा पृथक् है और शरीर पृथक् है। वे वापस अपने स्थान में लौट आए और आत्मध्यान में लीन हो गए। कुछ ही क्षणों में उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई। गुरु से पहले ही भावों की निर्मलता से शिष्य ने केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। केवलज्ञानी हो अनेक भव्य जीवों को धर्म का उपदेश प्रदान कर मोक्ष चले गये।

सारांश : चारित्र के प्रति सच्ची आस्था होने पर निश्चित सुख की उपलब्धि होती है। भले ही ज्ञान कम हो। आचार्य श्री कहते हैं - चारित्र में निर्मलता होने पर ज्ञान स्वयमेव प्रकट हो जाता है।

38. अकृतपुण्य

भोगवती नगरी के राजा कामवृष्टि की रानी विष्टदाना के गर्भ में पापी बालक के आते ही राजा की मृत्यु हो गई और राजा के नौकर सुकृतपुण्य के हाथ में राज्य चला गया। माता ने बालक को पुण्य हीन समझकर उसका नाम 'अकृतपुण्य' रख दिया और परायी मजदूरी करके उसका पालन किया।

किसी समय बालक एक किसान के खेत पर काम करने के लिये चला गया। किसान ने उसे अपने भूतपूर्व स्वामी का पुत्र समझकर बहुत कुछ दीनारें दीं किन्तु उसके हाथ में आते ही अंगारे हो गई। तब उसको उसकी इच्छानुसार चने दे दिये वे भी लोहे के बन गये। माता ने इस घटना से देश छोड़ दिया और सीमवाक गाँव के बलभद्र नामक जैन श्रावक के यहाँ भोजन बनाने का काम करने लगी।

सेठ के बालक को खीर खाते देखकर वह अकृतपुण्य भी

खीर मांगा करता था। तब एक दिन सेठ के लड़कों ने अकृतपुण्य को थप्पड़ों से मारा। सेठ ने उक्त घटना को जानकर बहन विष्टदाना को खीर बनाने के लिये चावल आदि सामान दे दिया। माता ने खीर बनाकर बालक से कहा बेटा, मैं पानी भरने जाती हूँ, इसी बीच में यदि कोई मुनिराज आवें तो उन्हें रोक लेना, मैं मुनिराज को आहार देकर तुझे खीर खिलाऊंगी।

भाग्य से सुव्रत मुनिराज उधर आ गये। बालक ने कहा मुनिराज! आप रुको, मेरी माँ ने खीर बनाई है, आपको आहार देंगी। मुनिराज के न रुकने से बालक ने जाकर उनके पैर पकड़ लिये और बोला देखूं अब कैसे जाओगे ?

उधर माता ने आकर पड़गाहन करके विधिवत् आहार दिया। बालक आहार देखकर बहुत प्रसन्न हो रहा था। मुनिराज अक्षीण ऋद्धिधारी थे। उस दिन खीर का भोजन समाप्त ही नहीं हुआ। तब विष्टदाना ने सपरिवार सेठ जी को, अनंतर सारे गांव को भोजन करा दिया। फिर भी खीर ज्यों की त्यों रही।

अगले दिन बालक वन में गाय चराने गया था। वहाँ उसने मुनि का उपदेश सुना। रात्रि में व्याघ्र ने उसे खा लिया। आहार देखने के प्रभाव से वह अकृतपुण्य मरकर स्वर्ग में देव हो गया।

पुनः उज्जयिनी नगरी के सेठ धनपाल की पत्नी प्रभावती के धन्य कुमार नाम का पुण्यशाली पुत्र हो गया। जन्म के बाद नाल गाड़ने को जमीन खोदते ही धन का घड़ा निकला। धन्यकुमार जहाँ-जहाँ हाथ लगाता वहाँ धन ही धन हो जाता था। आगे चलकर यह

Scanned by CamScanner

धन्यकुमार नवनिधि का स्वामी हो गया और असीम धन वैभव को भोगकर पुनः दीक्षा लेकर अंत में सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र पद पाया। यह है आहार दान का प्रभाव, जिससे महापापी अकृतपुण्य धन्यकुमार हो गया।

39. औषधि दान का फल

किसी समय मुनिदत्त योगिराज महल के पास एक गढ्डे में ध्यान में लीन थे। नौकरानी ने उन्हें हटाना चाहा। जब वे नहीं उठे तब उसने सारा कचरा इकट्ठा करके मुनिराज पर डाल दिया। प्रातः राजा ने वहाँ से मुनि को निकाल कर विनय से सेवा की। उस समय नौकरानी नागश्री ने भी पश्चाताप करके मुनि के कष्ट को दूर करने हेतु उनका औषधि से उपचार कर मुनि की भरपूर सेवा की। अंत में मरकर यह वृषभसेना हुई। जिसके स्नान के जल से सभी प्रकार के रोग-विष नष्ट हो जाते थे। आगे चलकर वह राजा उग्रसेन की पटरानी हो गई। किसी समय रानी के शील में आशंका होने से राजा ने उसे समुद्र में गिरवा दिया किन्तु रानी के शील के माहात्म्य से देवों ने सिंहासन पर बैठाकर उसकी पूजा की।

सारांश : नौकरानी ने जो मुनि पर उपसर्ग किये थे, उसके फलस्वरूप उसे रानी अवस्था में भी कलंकित होना पड़ा और जो उसने मुनि की सेवा करके औषधिदान दिया था उसके प्रभाव से उसे ऐसे सर्वौषधि ऋद्धि प्राप्त हुई कि जिसके प्रभाव से उसके स्नान के जल से सभी के कुष्ठ आदि भयंकर रोग और विष आदि दूर हो जाते थे, इसलिए औषधिदान अवश्य देना चाहिए।

40. विषापहार

द्विसंधान महाकाव्य के प्रणेता / रचयिता कविराज धनञ्जय पूजन में लीन थे। उनके सुपुत्र को सर्प ने डस लिया था। घर से कई बार खबर आने पर भी वे निस्पृह भाव से पूजन में पूर्णतया तन्मय रहे। इकलौते पुत्र की गंभीर स्थिति देख कुपित होकर उनकी धर्मपत्नि बच्चे को लेकर जिनमंदिर में आ गईं और उसी मूर्छित अवस्था में पुत्र को पति के सामने डाल दिया।

पूजा से निवृत्त हो धनञ्जय ने विचार किया। जिनक्ति का प्रभाव यदि आज नहीं दिखाया तो लोगों की श्रद्धा धर्म से उठ जायेगी। तत्काल विषापहारस्तोत्र की रचना करते हुए भक्ति में लीन प्रभु से कहने लगे-हे प्रभो! इस बालक का विष उतारने के लिए मैं मणि, मंत्र, औषधि की खोज में भटकने वाला नहीं मुझे तो आप रूप कल्पवृक्ष का ही आश्रय है सत्य है कि हे भगवन्! लोग विषापहार मणि, औषधियों, मंत्र और रसायन की खोज में भटकते फिरते हैं, वे नहीं जानते कि ये सब आपके ही पर्यायवाची नाम हैं।

इधर स्तोत्र रचना हो रही थी उधर पुत्र का विष उतर रहा था। स्तोत्र पूरा होते ही बालक निर्विष होकर उठ बैठा, चारों ओर जैनधर्म की जय-जयकार गूँज उठी धर्म की अपूर्व प्रभावना हुई।

41. अधःपतन का कारण

शिष्यों ने गुरु से शिक्षा प्राप्त कर ली। एक दिन बाद उन्हें धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए गुरु के निर्देशानुसार अलग-अलग स्थान पर जाना था। अतः सभी शिष्य आपस में बैठकर चर्चा कर रहे

Scanned by CamScanner

थे कि हमें जनता को अधःपतन से बचाने और धर्म के सम्मुख करने के लिए क्या उपाय करना चाहिए। तभी एक ने कहा-लोभ त्याग, दूसरे ने कहा- अहंकार का त्याग, तीसरे ने कहा-अहिंसा का पालन, चौथे ने कहा-काम वासना का त्याग। चर्चा में सभी के उत्तर भिन्न-भिन्न होने से शिष्य सन्तुष्ट नहीं हुए। वे गुरु के पास गये और विनम्रतापूर्वक अपनी समस्या उन्हें बतलाई।

गुरु ने उनसे पूछा- यह बताओ कि मेरा कमण्डल किस पदार्थ से बना है? शिष्यों ने कहा-लकड़ी का कमण्डल बना है। गुरु ने पुनः पूछा- यदि इसे नदी में डाल दें तो क्या होगा? उत्तर मिला-नदी में कमण्डल तैरेगा। यदि कमण्डल में एक छेद करके नदी में छोड़ दें तो क्या परिणाम होगा? गुरु ने प्रश्न किया। शिष्यों ने बतलाया-कमण्डलु नदी में डूब जायेगा। गुरुजी पुनः बोले -यदि मैं कमण्डल में दायीं ओर छेद कर दूँ तो क्या होगा? शिष्यों ने उत्तर दिया- आप कमण्डल में किसी भी ओर छेद करें कमण्डल नियम से डूबेगा ही।

गुरुजी ने शिष्यों को समझाया- वत्सो! यह मानव-जीवन कमण्डल के समान है। इसमें कोई भी दुर्गुणरूपी छिद्र होते ही पतनरूपी जल प्रवेश करके उसे पतित बना देता है। अतः मानव को अधःपतन से बचाने के लिए और धर्मसम्मुख करने के लिए उसके दुर्गुणरूपी छिद्र बन्द करना होंगे।

42. हींग की डिब्बी में केसर

एक व्यक्ति किसी के घर में मेहमान बन के गया। उनके यहाँ केसर का (केसरयुक्त) हलुवा बना था। वह उन (मेहमान) को

बहुत अच्छा लगा। उन्होंने सोचा कि अपन भी अपने घर में ऐसा हलुवा बनायेंगे। उन्होंने (मेजबान से) पूछ लिया कि आपने हलुवा कैसे बनाया था? मेजबान ने बता दिया कि ये-ये चीजें हमने मिलाई थीं और ऐसे बनाया था, इसमें केसर भी डाली थी-इसलिए ये इतना स्वादिष्ट बना। ठीक है, मेहमान ने सोचा, अपन भी बनायेंगे। उन्होंने अपने घर में बनाया लेकिन कुछ मजा नहीं आया। अब क्या करें? कैसे करें! सोचते रहे।

एक दिन वे (मेजबान) रास्ते में मिल गये तो उनसे पूछ लिया कि- 'आपके घर में जो केसर का हलुवा बना था वह तो बड़ा स्वादिष्ट था लेकिन हमने (अपने घर में) बनाया तो ढंग का ही नहीं बना। कभी हमारे यहाँ आइये तो बनाकर बता दीजिए।'

बोले-'ठीक है, अभी चले चलते हैं, अभी देखते हैं कि आपने क्या डाला था? कैसे किया था?' देखा जाकर के, सब एकदम ठीक था। पूछा - 'केसर डाली थी?'

'हाँ, बिल्कुल, वह बढ़ियावाली लाये थे, वही डाली थी।'

उन्होंने फिर पूछा - 'काहे में रखी थी केसर?'

'काहे में रखी थी! डिब्बी में रखी थी।'

'लाना जरा वह डिब्बी' - उन्होंने कहा। केसर जिस डिब्बी में रखी थी वह डिब्बी लाये। अब समझ में आ गया कि गड़बड़ कहाँ है? इस डिब्बी में पहले क्या रखा था? 'हींग।' हाँ, ये बात तो आप सबको मालूम है कि वह केसर क्यों बिगड़ गई? क्योंकि उस डिब्बी में पहले बदबूदार हींग रखी थी।

Scanned by CamScanner

इसी प्रकार यदि हम अपने जीवन में धर्म की सुगंधी, धर्म का स्वाद लेना चाहते हैं तो पहले हमें कषायों के संस्कार/गंध को दूर करना होगा। तभी धर्म सुनना सार्थक होगा।

43. द्वीपायन मुनि

द्वीपायन नामक एक मुनि थे। वे रत्नत्रय धारण किये हुए थे। महान तपस्वी थे। वे चाहते तो उनकी तपस्या का फल मीठा भी हो सकता था, किन्तु वे द्वारिका को जलाने में निमित्त बन गये।

दिव्यध्वनि के माध्यम से जब इन्हें ज्ञात हुआ कि मेरे निमित्त से बारह वर्ष के बाद द्वारिका जल जायेगी, तो यह सोचकर वे द्वारिका से दूर चले गये कि बारह वर्ष के पूर्व नहीं लौटेगे। समय बीतता गया और बारह वर्ष बीत गये होंगे, ऐसा सोचकर वे विहार करते हुए द्वारिका के समीप आकर एक बगीचे में पहुँचे, जहाँ वे ध्यानमग्न हो गये।

यादव वहाँ आये। द्वारिका के बाहर फेंकी गयी शराब को उन्होंने पानी समझा और पी गये। मदिरापान का परिणाम यह हुआ कि यादव नशे में होश खो बैठे। पागलों की तरह वे वहाँ पहुँचे, जहाँ द्वीपायन मुनि ध्यानस्थ थे। मुनि को देखकर यादव उन्हें गालियाँ देने लगे। इतना होने पर भी मुनि ध्यानस्थ रहे, किन्तु जब यादव नशे में चूर होकर मुनि को पत्थर मारने की क्रिया बहुत देर तक करते रहे, तब द्वीपायन का मन अपमान सहन नहीं कर सका। मन को ठेस पहुँची और मान जागृत हुआ, इसके लिए क्रोध जागा और उसके फलस्वरूप तैजसऋद्धि का उदय हुआ जिसके प्रभाव से द्वारिका जलकर राख हो

गयी।

आशय यह है कि मान-सम्मान की आकांक्षा पूरी न होने पर क्रोध उत्पन्न हो जाता है, जिस क्रोधाग्नि के भड़कने से बड़ी-बड़ी हानियाँ हो जाती हैं। अतः मार्दव धर्म धारण करें। द्वीपायन मुनि को भीतर तो यही श्रद्धान था कि मैं मुनि हूँ, मेरा वैभव समयसार है, समता परिणाम ही मेरी निधि है, मार्दव मेरा धर्म है, मैं मानी नहीं हूँ, लोभी नहीं हूँ, मेरा यह स्वभाव नहीं है। रत्नत्रय धर्म उनके पास था, उसी के फलस्वरूप उन्हें ऋद्धि प्राप्त हुई थी, लेकिन मन में यह पर्याय बुद्धि जाग्रत हो गयी कि ये मुझे गाली दे रहे हैं, मुझ पर पत्थर बरसा रहे हैं। यह पर्यायबुद्धि मान को पैदा करनेवाली है। अतः ज्ञानी बनो और पर्यायबुद्धि उत्पन्न न होने दो। उपयोग में स्थिर रहो।

44. परोपकार

एक बुढ़िया थी। उसके लड़के का नाम राजेन्द्र था। घर में बड़ी गरीबी थी। बुढ़िया ने कहा- पुत्र ! बाजार में जाओ, पूछकर आओ कि अपनी गरीबी कैसे दूर हो? राजेन्द्र गया। दुकानदारों से पूछने लगा। एक व्यापारी ने कहा-यहाँ से पचास कोस पर एक महात्मा रहता है, वह इस प्रश्न का उत्तर देने मे समर्थ है।

घर आया और बोला-माँ, मुझे आशीर्वाद दो, मैं जाता हूँ महात्मा जी के पास उस प्रश्न का उत्तर लेने। माँ ने खुशी-खुशी विदाई दी। वह चला। चलते-चलते एक गाँव आ गया। रात हो गई। उसने सेठ की हवेली में विश्राम लिया। सुबह जाने लगा तब सेठानी ने जानकारी ली। वह बोली मेरे भी एक प्रश्न का उत्तर ले आना- मेरी

Scanned by CamScanner

लड़की कब बोलेगी? राजेन्द्र आगे बढ़ा। जंगल में एक साधु मिल गये। बातचीत हुई। साधु ने कहा- मुझे साधु हुए पचास वर्ष हो गये किंतु अभी तक साधुत्व का स्वाद क्यों नहीं आया? इस प्रश्न का भी उत्तर लाना।

वह आगे चला- मार्ग में माली मिला। उसने कहा- इस वृक्ष के चारों तरफ कोई भी वृक्ष जड़ क्यों नहीं पकड़ रहा है, इसका उत्तर अवश्य लाना। राजेन्द्र महात्मा जी के पास पहुँचा। नमस्कार किसा और बोला-मैं कुछ प्रश्नों का उत्तर लेने आया हूँ। कृपा कीजिये। महात्मा ने कहा- इस समय एक साथ तीन प्रश्नों का उत्तर दे सकता हूँ,चाहे सो पूछ सकते हो। राजेन्द्र विषम समस्या में पड़ गया। प्रश्न चार हैं। आखिर अपना प्रश्न छोड़कर उन तीनों प्रश्नों का उत्तर लेकर वापस चला।

माली मिला। राजेन्द्र ने कहा माली! इस वृक्ष के चारों तरफ मोहरों से भरे हुए चार कलश हैं। जब तक कलश रहेंगे, तब तक कोई भी दूसरा वृक्ष जड़ नहीं पकड़ेगा। माली ने वहाँ खोदा। चार कलश मिल गये। माली ने आभार प्रदर्शित करते हुए कहा - राजेन्द्र! मोहरों का यह कलश देता हूँ। कलश लेकर वह आगे चला। मुनि मिले उसने कहा- महाराज! आपकी जटा में रत्न हैं। जब तक यह रहेगा, साधुत्व का स्वाद नहीं आयेगा। मुनि ने कहा-तुम उपकारी हो, यह लो रत्न।

राजेन्द्र सेठानी के घर पहुँचा। उसने कहा- आपकी लड़की जब अपने पति का मुंह देखेगी, वह बोलने लग जायेगी। अचानक

वह लड़की वहाँ आ गई। राजेन्द्र को देखते ही बोलने लगी। सेठानी ने कहा- इसके पतिदेव आप ही हैं। राजेन्द्र का विवाह हो गया। लाखों का धन लेकर राजेन्द्र रथ में धर्मपत्नि सहित घर पहुँचा। माँ ने पूछा पुत्र! गरीबी कैसे दूर होगी, उत्तर ले आया? पुत्र बोला- माता जी, आपके आशीर्वाद से लाखों का धन मिल गया और साथ में मेरा विवाह भी हो गया। उसने आदि से अंत तक की कहानी सुनाई। वह अब ठाठ-बाट से रहने लगा। गरीबी दूर हो गई।

जो व्यक्ति दूसरों का उपकार करते हैं, दूसरों का भला करते हैं, उनका भला अपने आप ही हो जाता है किन्तु परोपकारी संसार में विरले मिलते हैं। महापुरुष पर-उपकार के लिये जीवन खपा देते हैं।

45. दया

एक बार की बात है। एक दानी व न्यायप्रिय राजा था। उसकी प्रजा उससे बहुत खुश थी। इन्द्र की सभा में उसकी दानशीलता की चर्चा होती रहती थी। इन्द्र उनकी परीक्षा लेने के लिये मौका देख रहे थे।

एक बार राजा शिकार खेलने गये, वहाँ उसने एक बूढ़े आदमी को देखा। बूढ़ा आदमी बहुत भूखा व गरीब था। राजा ने उसे बाबा कहकर आवाज दी और अपने साथ महल ले आये। वहाँ उसे खाना व हर सुविधा दी। उन्हें अपने पिता की तरह सम्मान दिया।

एक दिन वह फिर शिकार खेलने गये। आसमान में काले बादल घिर आये, सहसा तूफान आ गया। इन्द्र ने सोचा अब उनकी परीक्षा लेनी चाहिये। राजा अब अपने साथियों से बिछुड़ गये थे। उस

Scanned by CamScanner

समय उनके पास एक आदमी आया बोला- मैं अपने साथियों से बिछुड़ गया हूँ। आप तो हमारे दानशील महाराज हैं। कृपया मुझे कुछ धन दे दीजिये जिससे मैं अपनी भूख शान्त कर सकूँ।

प्रजाप्रिय राजा अपनी मुसीबत का जिक्र न कर बोला, मैं तुम्हारी सहायता कर सकता हूँ लेकिन इसके लिए मुझे एक पत्थर की जरूरत है।

उस व्यक्ति ने पत्थर उठाकर राजा को दिया।

अपने साथियों से बिछुड़ा असहाय राजा जैसे ही पत्थर से अपना सोने का दाँत तोड़ने लगा उसी क्षण आकाशवाणी हुई, हे दानप्रिय राजन् ! रुक जाओ। देवताओं ने तुम्हारी परीक्षा लेने के लिये यह सब नाटक रचा था। तुम अपनी परीक्षा में उत्तीर्ण हुए।

इन्द्र ने कहा, राजन् जो कुछ माँगना चाहो माँगो।

राजा ने कहा, मैं इतना माँगता हूँ कि मेरी प्रजा सुखी रहे।

46. मुनि सेवा

एक समय श्री धर्मघोष मुनिराज चम्पानगरी में आहार करके तपोवन की ओर जा रहे थे। चलने के अधिक परिश्रम से वे अत्यधिक थक गये। तब एक वृक्ष के नीचे बैठ गये। उस समय वे प्यास की बाधा से व्याकुल हो रहे थे। उन्हें प्यासा देखकर गंगादेवी एक कलश में पवित्र जल लेकर आई और बोली हे मुनिवर आप इस जल को पीकर प्यास शांत कीजिये।

मुनि जी ने कहा-हे देवी तूने अपना कर्तव्य किया सो ठीक है

परन्तु हमारे लिये देवों द्वारा इस प्रकार असमय में दिया गया आहार-पानी लेना उचित नहीं है, यह सुनकर देवी चकित रह गई। उसी समय वह विदेहक्षेत्र में गई और वहाँ भगवान् के समवसरण में नमस्कार कर प्रश्न किया कि हे भगवन् ! एक प्यासे मुनि को मैं जल पिलाने गई थी, परन्तु उन्होंने वह जल नहीं पिया सो इसका क्या कारण है ? दिव्यध्वनि में उत्तर मिला कि मुनि लोग शुद्ध श्रावक के यहाँ दिन में एक बार ही खड़े-खड़े आहार लेते हैं, देवों से आहार नहीं लेते।

देवी यह उत्तर पाकर निरुपाय हो सोचने लगी कि हमें कुछ तो वैयावृत्य करके इनकी प्यास को शांत करना चाहिये। उसने वहाँ से आकर मुनि के चारों तरफ सुगंधित ठंडे जल की वर्षा शुरू कर दी। जिससे ठंडी-ठंडी हवा लगकर मुनिवर को एकदम शांति हो गई, इसके बाद वे मुनिराज शुक्लध्यान में आरूढ़ हो घातिया कर्म का नाश कर केवलज्ञान को प्राप्त हो, केवली हो गये। स्वर्गों से देवों ने आकर उनकी पूजा की, गंधकुटी की रचना हुई, सभी ने जैनधर्म का उपदेश सुना।

Scanned by CamScanner

[खण्ड-5]

47. सोचने की बातः यह सौदा और खरीददार

गधों पर अजीब सामान लदा हुआ देखकर राहगीर ने पूछ ही लिया, भाई इनमें क्या चीज ले जा रहे हो ?

उत्तर मिला- इन पाँच गधों पर पाँच तरह के सामान हैं। उनमें एक पर अत्याचार, दूसरे पर घमण्ड, तीसरे पर ईर्ष्या, चौथे पर बेईमानी और पाँचवे पर मायाचारी लिए जा रहा हूँ।

राहगीर ने आश्चर्य से पूछा-क्या इसका भी खरीददार हो सकता है। गधे वाले ने कहा-अजी क्यों नहीं सब बिकता ही रहता है- पहले गधे के माल को राजा, दूसरे को रईस, तीसरे को विद्वान्, चौथे को व्यापारी और पाँचवे को स्त्रियाँ खरीदने के लिये लालायित रहती हैं।

राहगीर अपने प्रश्न का उत्तर गधे वाले से पाकर यह सोचता हुआ चला गया, हे भगवान इस दुनियाँ के अन्दर ये ऊँचे पद वाले राजा, महाराजा, रईस, विद्वान्, व्यापारी और स्त्रियाँ कब अपने कर्त्तव्यों को समझेंगे।

48. उदारता की जीत

प्रजा, कवियों एवं चारणों से राजा कौशल की प्रशंसा सुन ईर्ष्या के वश हो काशी नरेश ने अचानक आक्रमण करके राजा कौशल को हरा दिया। राजा कौशल भागकर जंगल में चला गया। काशी नरेश कौशल का राजा बना लेकिन प्रजा उससे संतुष्ट नहीं

हुई। तब काशी नरेश ने सोचा, जब तक कौशल राजा जीवित है, प्रजा मुझ से संतुष्ट नहीं हो सकती, अतः उसने घोषणा कर दी कि जो कोई कौशलराज को जिन्दा या मरा मेरे सामने लायेगा उसे सौ स्वर्ण मुद्राएँ पुरस्कार रूप में दी जायेगी।

यह सूचना राजा कौशल ने भी जंगल में किसी के मुख से सुन ली। एक दिन एक पथिक ने वनवासी राजा कौशल से कौशल देश का मार्ग पूछा। राजा ने उससे पूछा तुम कौशल क्यों जाना चाहते हो ? पथिक अपनी आँखें पोंछते हुए बोला-"भाई! मैं बड़ा कष्ट में हूँ। मेरा करोड़ों की सम्पत्ति से भरा जहाज समुद्र में डूब गया है, मैं एक दरिद्र से भी बड़ा दरिद्र हो गया हूँ। मैंने कौशल राजा की उदारता और वात्सल्य -प्रेम के बारे में बहुत सुना है। मुझे विश्वास है कि वे मेरी कुछ-न-कुछ सहायता अवश्य करेंगे।"

राजा कुछ सोचकर बोला- "तुम किसी बात की चिन्ता नहीं करो, मैं तुम्हें अवश्य ही कौशल देश पहुँचा दूँगा।" और उसको साथ लेकर काशी दरबार में पहुँचा और बोला- "महाराज! आपने कौशलराज को पकड़कर लाने वाले को सौ स्वर्ण मुद्राएँ देने की घोषणा की है। मैं वही कौशलराज हूँ, आप मेरा सिर ले लीजिए एवं मेरे साथी को सौ स्वर्ण मुद्राएँ दे दीजिए।" यह सुन काशी-नरेश को समझ में आया कि कौशलराज की प्रजा इतना क्यों चाहती है।

सच में, यह राजा अपने प्राण देकर प्रजा के दुःख को दूर करने की क्षमता रखता है और राजा को ऐसा ही होना चाहिए। उसने गद्गद् होकर कौशलराज को अपने हृदय से लगा लिया ओर

Scanned by CamScanner

राजसिंहासन पर बिठाते हुए बोला-''मैं आपको क्या मारूँ, मैं अपनी उस दुष्ट आशा एवं ईर्ष्या को मारूंगा जिसने ऐसे उदार-दयालु राजा के साथ मुझसे ऐसा व्यवहार करवाया।'' ऐसा कहते हुए उसने कौशलराज की अधीनता स्वीकार कर ली।

सारांश : कौशलराज की उदारता से उसे खोया हुआ राज्य भी सहज रूप से वापस मिल गया इसलिए कितनी भी आपत्ति में हो, उदारता नहीं छोड़नी चाहिए।

49. हिंसा से डर

राबिया नाम की एक संत सबको दिल से प्यार करती थी। उसके घर का दरवाजा सभी के लिए खुला रहता था। एक बार राबिया जंगल में घूमने गई। वह बड़े प्रेम से जंगल के पशु-पक्षियों को देख रही थी तभी बहुत सारे पशु-पक्षी उसके चारों ओर घूमने लगे। कुछ उसके शरीर से चिपटे, कोई गोदी में बैठे थे तो कोई सिर पर बैठे थे।

उसी समय हसन बसही नामक संत भी वहाँ आ पहुँचा। उसे यह सब देख बहुत अच्छा लगा। लेकिन जैसे ही वह राबिया के पास पहुँचा सारे पशु-पक्षी वहाँ से भाग गये। यह देख उसने निराशा के साथ राबिया से पूछा- ''राबिया! यह क्या है कि इतने जानवर तुम्हारे पास कितनी प्रसन्नता और आनन्द से खेल रहे थे, तुम्हें घेरे हुए थे और मेरे आते ही सभी चले गये। जैसे- मैं कोई संसारी आदमी हूँ।''

राबिया ने पूछा- ''आप क्या खाते हैं ?'' संत ने कहा- ''उससे तुम्हें क्या मतलब है।'' राबिया बोली- ''मुझे कुछ मतलब है तभी तो पूछ रही हूँ।'' संत बोला- ''मैं गोश्त खाता हूँ।'' राबिया

ने हँसकर कहा- ''गोश्त खाते हैं और चाहते हैं कि पशु-पक्षी तुम्हारे पास आएँ। यह कैसे हो सकता है ? जिन्हें तुम मारते हो वे तुमसे डरें नहीं, भागें नहीं। जल्लाद से कौन नहीं डरता।'' हसन की आँखें खुल गयीं और उसने उसी क्षण मांस खाने का त्याग कर दिया।

सारांश: हिंसक प्राणियों से सभी डरते हैं इसलिए कभी किसी की हिंसा नहीं करनी चाहिए।

50. पूजा का फल

राजगृही नगर में भगवान् महावीर का समवशरण आया हुआ है। यह खबर सारे नगर में हवा की भांति फैल चुकी थी। सभी नगरवासी प्रभु के दर्शन एवं धर्मोपदेश सुनने के लिए समवशरण में पहुँचने की तैयारी करने लगे थे।

गाँव के पनघट पर पानी भरने पहुँची कुछ महिलाएँ आपस में चर्चा कर रही थी कि बहन आज जल्दी घर का काम निपटा लेना क्योंकि हमें प्रभु की दिव्यदेशना सुनने चलना है। उनकी इस वार्ता को कुएँ में रहने वाले एक भव्य मेंढक ने सुन ली। वह मेंढक पूर्व पर्याय में सच्चे देव-शास्त्र-गुरु का शिष्य था किन्तु अंत में किसी कारण वशात् आर्तध्यान पूर्वक मरकर मेंढक की पर्याय को प्राप्त हुआ। अतः पूर्व संस्कार वशात् उपरोक्त वार्ता को सुनते ही उसके मन में समवशरण में जाने के भाव हुए। वह सोचने लगा कि इस कूप में से मेरा बाहर निकलना कैसे सम्भव हो सकता है। तभी उसे ऊपर से नीचे की ओर उतरती हुई बाल्टी दिखाई दी, जैसे ही बाल्टी पानी में डूबी, पानी

Scanned by CamScanner

बाल्टी में भरा कि मेंढक भी बाल्टी में कूद कर जा पहुँचा एवं बाल्टी के ऊपर पहुँचते ही वह बाल्टी से बाहर उछल गया एवं समवशरण में जाने की तैयारी करने लगा।

वह विचारने लगा कि तीन लोक के नाथ कि चरण शरण में जा रहा हूँ तो खाली हाथ कैसे जाऊँ। कहा भी है कि-राजा, वैद्य, देवता, गुरु, ज्योतिषी आदि के पास खाली नहीं अपितु बहुमूल्य वस्तु लेकर जाना चाहिए। मैं तुच्छ प्राणी प्रभु को क्या समर्पित कर सकता हूँ। तभी उसे निकट गुलाब के पेड़ के नीचे पड़ी हुई फूल की पांखुड़ी दिखाई दी। उसने उसे ही अपने मुख में दबाया और समवशरण की ओर जाने लगा। राजा की सवारी और विशाल जैन समुदाय को मेंढक ने देखा तो प्राणों की रक्षा करते हुए वह धीरे-धीरे बचकर चलने लगा परन्तु कर्मयोग से राजा श्रेणिक के हाथी के पैर के नीचे आ ही गया जिससे तत्काल उसके प्राण पखेरू उड़ गये।

राजा श्रेणिक ज्यों ही समवशरण में पहुँचा तो उसने क्या देखा कि एक देव जिसके मुकुट में मेंढक का चिह्न, प्रभु के समवशरण में अभी-अभी पहुँचा अत्यन्त भक्ति के साथ नृत्यगान में लीन है। राजा ने प्रभु से प्रश्न किया कि-हे प्रभु यह देव कौन है और कहाँ से आया ? तब दिव्यध्वनि में राजा श्रेणिक ने उस मेंढक की घटना सुनी तव उसे ज्ञात हुआ कि जिनेन्द्र भक्ति एवं पूजा के भावों से युक्त मेंढक मरकर अंतर्मुहूर्त मात्र में देव पर्याय को प्राप्त हुआ और सबसे पहले प्रभु के समवशरण में पूजन हेतु आया है।

51. त्याग की महिमा

खदिरसार नाम का एक भील जंगलों में रहता था। एक बार शिकार हेतु वह और उसकी पत्नी दोनों जंगल में विचरण कर रहे थे कि अचानक सामने हिलती हुई झाड़ियाँ दिखाई दी। हिलती झाड़ी देखकर भील ने सोचा झाड़ी के पीछे कोई पशु होगा। अतः उसे मारने हेतु उसने तीर कमान पर रख निशाना साध लिया। जैसे ही वह तीर चलाने के लिए तैयार हुआ कि उसकी पत्नि ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा - हे स्वामिन्! तीर मत चला देना अन्यथा बड़ा अनर्थ हो जायेगा वह कोई पशु नहीं अपितु कोई वन देवता हैं। यह बात सुनते ही भील ने तीरकमान नीचे कर लिया तथा सामने आते हुए वन देव को देखकर अचम्भे में पड़ गया।

दोनों ने उन देवता को हाथ जोड़कर नमस्कार किया तथा वे उनके चरणों में बैठ गये। मुनिराज ने उन दोनों को आशीर्वाद दिया। गद्गद् होकर भील युगल ने मुनिराज से निवेदन किया-हे प्रभु! हमारे कल्याण के लिए कोई मार्ग बतायें। तब मुनिराज ने पूछा-हे भव्य पुरुष! तुम इस जंगल में अपना जीवनयापन कैसे करते हो। तब वह भील बोला-हे प्रभु! जंगल में रहने वाले पशुओं को मारकर उसके मांस को खाकर हम अपना जीवनयापन करते हैं।

मुनिराज बोले-अरे! प्राणियों का वध करके मांस खाना तो महापाप माना गया है। तुम्हें इसका त्याग करना चाहिए। तब भील बोला-हे प्रभु! यह जंगल है यहाँ अन्नादि पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलता। यदि हम मांस खाना छोड़ देगें तो संभवतः हमें भूखे ही मरना पड़ेगा

Scanned by CamScanner

अतः कोई दूसरा उपाय बताइये।

मुनिराज ने भील की इन बातों को सुनकर विचार किया, ये आत्मकल्याण के इच्छुक तो हैं कुछ उपदेश इन्हें अवश्य देना चाहिए। अतः पूछा-क्या तुम कौए के मांस का त्याग कर सकते हो ? तब दोनों पति पत्नि ने कहा-हाँ हमने अभी तक कभी कौए का मांस नहीं खाया और आगे भी नहीं खायेंगे ऐसा आपके समक्ष संकल्प करते हैं। मुनिराज ने आशीर्वाद दिया और वे अपने पथ पर निकल गये।

बहुत काल व्यतीत होने पर एक दिन भील के पेट में असहनीय पीड़ा होने लगी। तब वैद्य को बुलाया और औषध मांगी तब वैद्य ने कहा - इस रोग के इलाज की एक मात्र औषधि है जिसे कौए के मांस के साथ खाना पड़ेगा। जैसे ही भील ने यह बात सुनी उसने अपने संकल्प की बात वैद्य के समक्ष रखी, लेकिन वैद्य ने अन्य कोई उपाय न बताकर उसे नियम तोड़ लेने की सलाह दी। तब भील ने कहा-भले ही मेरे प्राण चले जायें किन्तु देवता के समक्ष लिए नियम को मैं तोड़ नहीं सकता। अतः उसने दवाई सेवन नहीं की।

कर्म योग से कुछ ही दिनों में उसकी मृत्यु हो गई और वह मरकर सौधर्म स्वर्ग में देव हो गया। तथा आगे चलकर वही जीव राजा श्रेणिक बना। जो भविष्यकाल में तीर्थंकर बनेंगे।

एक छोटे से त्याग से जो महान् पुण्य संचय हुआ उसके समक्ष मांस भक्षण से संचित पाप भी फीका पड़ गया। अतः हमें निरंतर पाप त्याग के अभ्यास में लगे रहना चाहिए एवं लिए गए नियमों का दृढ़ता पूर्वक पालन करना चाहिए।

52. तीन लाख की तीन बातें

किसी नगर में एक जटाधारी संत पधारे। संत को देखकर नगरवासियों ने उनसे अपने घर पर भोजन करने हेतु निवेदन किया। तब संत जी बोले-मैं भोजन तो करूँगा लेकिन एक शर्त है वह ये कि मैं तीन बात आप लोगों को दूंगा जो मेरी बातों को मुझसे लेगा उसी के घर में भोजन करुंगा और मेरी एक बात की कीमत है एक लाख रुपये। नगरवासियों ने जब यह बात सुनी तो सभी ने मना कर दिया और कहा कि इतनी महँगी बात तो हम नहीं ले सकते आप कहीं और प्रस्थान करें।

आखिर तीन दिन व्यतीत हो गये साधु जी को कहीं भोजन नहीं मिला अतः उपवास हो गये। यह बात नगर के राजा के कानों तक पहुँची। राजा बहुत दुखी हुआ। मेरे नगर में कोई संत आयें और हम उनको भोजन नहीं करा सके। हमारा गृहस्थाश्रम व्यर्थ है। उसने अपने सेवकों को तुरंत आज्ञा दी। उन्हें ससम्मान राजमहल में आमंत्रित किया जावे। राजा के निवेदन पर संत जी महल पहुँचे तो राजा दोनों हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। उसने साधु जी से निवेदन किया कि मेरी भोजनशाला में आप भोजन ग्रहण करें एवं कृतार्थ करें। मुझे आपकी सभी शर्तें मंजूर हैं। अतः आप मुझ पर कृपा करें।

साधु ने राजा के आग्रह पर भोजन स्वीकार कर लिया। भोजन करने के बाद राजा ने नम्रता पूर्वक पुनः निवेदन किया - हे पूज्य श्री! मेरे लिए उपदेश प्रदान करें। तब साधु जी ने उन्हें तीन बातें बताईं - पहली बात- प्रतिदिन सुबह उठकर घूमने जाना, दूसरी बात-

Scanned by CamScanner

शत्रु भी अगर तुम्हारी अतिथि बनकर आये तो उसका सत्कार करना, तीसरी बात-विपरीत परिस्थितियों में भी उतावली नहीं करना। राजा ने कहा-गुरुजी निश्चित मैं आपकी इन बातों को अपने जीवन में उतारकर अपना जीवन सफल बनाऊँगा। तत्पश्चात् जब राजा साधु जी को तीन लाख रुपये देने लगे तो साधु जी मुस्कुराये और बोले - बेटा मुझे धन से क्या प्रयोजन ? धन की चाह होती तो घर क्यों छोड़ता। मुझे तो ये परखना था कि किसके मन में मेरे उपदेश को ग्रहण करने की इच्छा है। किसके लिए धन से ज्यादा उपदेश मूल्यवान है। अतः मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है। तुम निरंतर धर्ममय जीवन बिताते हुए प्रजा का पालन करो। मैं आगे जाता हूँ।

उपदेश को ग्रहण कर राजा प्रतिदिन सुबह-सुबह घूमने के लिए जाने लगा। लगभग एक माह व्यतीत हुआ कि सुबह-सुबह जब वह घूमने जा रहा था कि उसे रास्ते में एक बहुत बड़ी महिला की आकृति दिखाई दी। वो महिला जोर-जोर से रो रही थी। राजा ने पूछा - तुम कौन हो और क्यों रो रही हो ? उसने जवाब दिया- मैं भवितव्यता हूँ अर्थात् भविष्य में होने वाली घटना का प्रतीक। यहाँ का राजा बहुत धर्मात्मा और प्रजा का हितैषी है वह तीन दिन पश्चात् मृत्यु को प्राप्त हो जायेगा अतः उसकी मृत्यु के कारण दुखी होकर मैं रो रही हूँ।

राजा आश्चर्य में पड़ गया उसने पूछा- यहाँ का राजा तो अभी जवान है, निरोग है फिर अचानक उसका मरण कैसे हो जायेगा। तब वह बोली-तीन दिन बाद सामने की लाल पहाड़ी से एक जहरीला

काला सर्प निकलेगा और वह राजा को डस लेगा जिससे राजा के प्राण पखेरु उड़ जायेंगे। पुनः राजा ने प्रश्न किया क्या इसका कोई उपाय नहीं है ? तब वह बोली- यदि उस क्षण स्वेच्छा से कोई प्राण त्यागने को तैयार हो जाये तो राजा का जीवन बच सकता है। इतना कहकर वह परछाई लुप्त हो गई।

राजा वापस अपने महल पहुँचा तो सबसे पहले अपनी रानी के पास पहुँचकर उसने प्रातःकाल की समस्त घटना उसे सुना दी तथा कहा-तुम विपत्ति के इन क्षणों में धीरजपूर्वक कार्य करना तथा अपनी इकलौती पुत्री के लिए जब तक कोई योग्य राजकुमार नहीं मिल जाता तब तक तुम राजकुमारी को ही पुरुष के वस्त्र पहनाकर राज सिंहासन पर बैठा देना। इतना कहकर राजा राजदरबार की ओर जाने लगा तभी रास्ते में उसे साधु की दूसरी बात याद आई कि शत्रु भी यदि अतिथि बनकर आये तो उसका सत्कार करना। उसने विचार किया कि पहाड़ी से आने वाला सर्प भी तो अतिथि है मुझे उसका सत्कार करना चाहिए। अतः सेवकों को आदेश देकर पहाड़ी से महल तक के रास्ते में सुगन्धित फूल बिछवा दिये तथा दूध से भरे हुए कटोरे रास्ते में दोनों ओर रखवा दिये।

दो दिन बाद नियत समय पर सर्प निकला और सीधे महल की ओर जाने लगा। रास्ते में उसने फूलों से भरा मार्ग देखा तो विचार करने लगा काँटों और कंकड़ों पर चलने वाला मैं किसने मेरे मार्ग में फूल बिछा दिए। कुछ ही आगे बढ़ा कि रास्ते में दोनों ओर दूध से भरे कटोरे देखे तो वह दूध पीने लगा। फिर आगे बढ़ता हुआ राजमहल में पहुँचा।

Scanned by CamScanner

ज्यों ही राजा ने सर्प को आते देखा तो दोनों हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और सर्प से निवेदन करता है। हे नागराज! तुम अपना कार्य करो मैं तुम्हारे समक्ष खड़ा हूँ। सर्प ने सोचा-यही वह महापुरुष है जिसने मेरे मार्ग में फूल बिछाये, मुझमें शत्रुता जानकर भी इतना सत्कार किया क्या मैं इसके प्राण ले लूँ। नहीं-नहीं मैं इतना कृतघ्न नहीं हूँ। वह फण उठाकर खड़ा हो गया और मनुष्य की आवाज में बोलता है कि हे राजन्! मेरा जीवन तो पापमय ही है जब तक धरती पर रहूँगा मेरे कारण दूसरों का अहित ही होगा और तुम धरती पर रहोगे तो प्रजा सुख और शांति से जीवित रहेगी अतः मैं स्वेच्छा से प्राण त्यागता हूँ। ऐसा कहकर वह पलटी खा जाता है और मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

एक तरफ अपने प्राण बच गये इसकी खुशी किन्तु दूसरी तरफ सर्प के प्राण चले गये इसका दुख। फिर जो हुआ सो हुआ ऐसा विचारकर अपनी रानी के पास इस बात की सूचना देने के लिए अपने कदम रनवास की ओर बढ़ाता हैं और जैसे ही रानी के महल के निकट पहुँचकर खिड़की से अंदर की ओर देखता है तो आँखें लाल हो जाती हैं। तलवार से म्यान बाहर निकल आती है। इतना बड़ा विश्वासघात। जिसे मैं प्राणों से ज्यादा चाहता हूँ उस रानी के महल में अन्य पुरुष एक साथ एक आसन पर। मारे क्रोध के वह उस पर तलवार चलाने के लिए आगे बढ़ा उसको साधु महाराज की तीसरी बात याद आ गई कि विपरीत परिस्थितियों में भी उतावली नहीं करना। अतः वह तलवार वापस म्यान में रख लेता है और जैसे ही आगे बढ़ता है तो क्या देखता है कि वह पुरुष और कोई नहीं उसकी

अपनी इकलौती पुत्री ही थी जिसे राजाज्ञा से रानी ने पुरुष के वस्त्र पहना दिये थे और पिता की मृत्यु के दुख से बेटी से गले लग कर रो रही थी। जैसे ही राजा ने देखा तो हक्का बक्का रह गया और सोचने लगा आज मैं बहुत बड़े अनर्थ से बच गया। वास्तव में साधु जी की बातें लाखों की नहीं कई करोड़ों की, अमूल्य थी।

क्योंकि पहली बात मानने से राजा को अपनी मृत्यु का पता चल गया। दूसरी बात मानने से उसके प्राण बच गए और तीसरी बात मानने से वह अपनी पुत्री की हत्या के पाप से बच गया।

सारांश : हमें अपने जीवन में सदा गुरुओं का सत् उपदेश ग्रहण करना चाहिए तथा उसे जीवन में उतारकर अपना जन्म सफल बनाना चाहिए।

53. विशल्या की कथा

चक्रवर्ती की पुत्री अनंगसरा किसी एक दिन अपनी सखियों के साथ उपवन में झूला झूल रही थी कि आकाश से गुजरते हुए एक विद्याधर ने उसका सुंदर रूप देखा तो उस पर मोहित हो गया। चूँकि उस समय उसकी पत्नि उसके साथ में थी। अतः पत्नि को अपने घर में पहुँचाकर ही पुनः उपवन में आया तथा अनंगसरा का अपहरण कर उसे अपने विमान में बिठाकर नगर की ओर ले जाने लगा। उस समय रास्ते में उसकी पत्नि को देखकर उसने विद्या के द्वारा अनंगसरा को घने जंगल में छोड़ दिया और स्वयं भाग गया।

अनंगसरा बहुत समय तक जंगल में भटकती रही एवं वहीं फल-फूल खाकर जीवन गुजारने लगी। एक दिवस कोई राजा शिकार

Scanned by CamScanner

खेलने आया और उसने अनंगसरा को पहचान लिया। तब उससे कहा - तुम मेरे साथ चलो। तब उसने कहा-मैंने तो देशव्रत ले लिया है। अब मैं इस जंगल से बाहर नहीं जाऊँगी। अतः आप कष्ट न करें। उन्होंने वापस नगर में पहुँचकर चक्रवर्ती को इस बात की सूचना दी। पुत्री को लाने के लिए चक्रवर्ती सेना सहित जंगल में पहुँचा। उसने क्या देखा कि एक बड़ा-सा अजगर अनंगसरा को निगल चुका है अतः तीरकमान निकालकर अजगर को मारने को उद्यत हुआ। त्यों ही अनंगसरा बोल उठी-हे पिताजी! आप तीर न चलायें क्योंकि मेरे समस्त शरीर में विष व्याप्त हो चुका है। अब मेरा बचना सम्भव नहीं। यदि मैं बच भी गई तो इस जंगल के बाहर नहीं जाऊँगी ऐसा मेरा संकल्प है अतः आप व्यर्थ में हिंसा का पाप अपने ऊपर न लें। यह शब्द सुनते ही पिता की आँखों में आँसू आ गये। देखते-देखते अजगर ने उसे पूरा निगल लिया।

धर्मध्यान पूर्वक मरण होने से वह मरकर स्वर्ग गई एवं वहाँ से आकर विशल्या नाम की राजकन्या हुई। उस कन्या के स्नान के जल में वह शक्ति थी कि उसे शरीर पर लगाने से बड़े-बड़े रोग दूर हो जाया करते थे। इसी विशल्या के लक्ष्मण के निकट पहुँचने मात्र से रावण द्वारा फेंकी अभेद्य विजया शक्ति लक्ष्मण के शरीर से भाग गई थी एवं लक्ष्मण को जीवन दान मिला था।

54. ब्रह्मगुलाल मुनि

किसी नगर में ब्रह्मकुमार नाम का एक बहुरूपिया रहता था। वह अनेक प्रकार के रूप धर कर लोगों का मनोरंजन किया करता

था। तथा उससे प्राप्त धन से अपनी आजीविका चलाता था। कभी वह शंकर का रूप तो कभी वह गणेश का तो कभी दुर्गा का, कभी भारत माता का, कभी पागल का, भिखारी का राजाओं आदि का अनेक रूप धारण किया करता। रूप धारण करने पर यह नकली रूप है यह कहना कठिन हुआ करता था। पूरे राज्य में उसकी इस कला की खबर फैल चुकी थी।

राज दरबार में राजा ने जब ब्रह्मगुलाल की बात सुनी तो उनका मन भी उत्कंठित हो उठा। उन्होंने ब्रह्मगुलाल को सभा में बुलाया और कहा - तुम हमें भी कोई अच्छा सा रूप धरकर दिखाओगे।

ब्रह्मगुलाल ने राजा से हाथ जोड़कर निवेदन किया जो आज्ञा आप प्रदान करेंगे वैसा ही होगा। कहिए मैं किसका रूप बनाकर हाजिर होऊँ। तब राजा के साथ सभी सभासद बोल पड़े। क्यों न तुम शेर का रूप बनाकर आओ। तब ब्रह्मगुलाल सहम सा गया फिर उसने निवेदन किया कि हे राजन्! सिंह के रूप के साथ यदि हिंसत्व जाग्रत हो गया व कुछ अनर्थ हो गया तो आप मुझे एक खून माफ का अभयदान दें तो मैं इस रूप को धर सकता हूँ। राजा द्वारा अभयदान मिलने पर वह तीसरे ही दिन सिंह का रूप धरकर सभा में दहाड़ता हुआ आया और राजा के समक्ष शांत भाव से बैठ गया। उसी क्षण राजा के बाजू में बैठे राजकुमार ने हँसी उड़ाते हुए कहा-अरे ये सिंह नहीं है गधा है। अन्यथा क्या यह इस तरह शांत बैठता। ब्रह्मगुलाल को इतना सुनना था कि उसके भीतर का सिंहत्व जाग उठा मेरी कला का अपमान असहनीय है और दहाड़ता हुआ छलांग लेकर सीधे

Scanned by CamScanner

राजकुमार के ऊपर झपट पड़ा। भयानक प्रहार से भयभीत हुआ राजकुमार ने अपने प्राण त्याग दिए।

अब क्या ? सारी प्रजा में सन्नाटा छा गया। राजा भी उस कलाकार को कुछ न कह सका क्योंकि उसने पहले ही उसे अभयदान दे चुका था।

इस घटना से राजा बहुत दुखी रहने लगा। उसका किसी भी कार्य में मन नहीं लगता था। तब मंत्रियों ने कहा-हे राजन्! आप किसी दिगम्बर मुनि का सान्निध्य प्राप्त करें। उनके वचन सुनें निश्चित ही आपका मन हल्का हो जायेगा। क्योंकि गुरु की वाणी शीतल चंदन से भी कई गुना अधिक संताप को हरने वाली होती है। तब राजा ने पूछा कि इस समय मुनिराज के दर्शन कहाँ उपलब्ध हो सकेंगे। क्योंकि सभी पर्वतों में रत्न नहीं होते, सभी वनों में चंदन के वृक्ष नहीं होते एवं सभी हाथियों के मस्तक में मोती नहीं होते उसी प्रकार साधुओं के सान्निध्य सर्वत्र नहीं मिल सकता फिर क्या करें। तब मंत्रियों ने सलाह दी। क्यों न ब्रह्मगुलाल को ही बुलाकर उसे मुनि का रूप धरकर आने को कहा जाए। ऐसा ही ठीक होगा। विचारकर ब्रह्मगुलाल को बुलाया गया।

राजा ने जब अपनी बात रखी तो वह सोचने लगा यह तो बहुत कठिन होगा किन्तु राजा की आज्ञा और मेरी परीक्षा की घड़ी है। मुझे कुछ भी हो यह रूप बनाना ही होगा। उसने राजा से कहा कि-हे राजन्! इस रूप को धारण करने के लिए मुझे कुछ समय अपेक्षित है। अतः दो माह बाद मैं आपके समक्ष उपस्थित होऊँगा।

आज्ञा लेकर वह वापस चला गया।

दो माह बाद राजा दरबार में बैठा था अचानक दिगम्बर मुनिराज को देखकर वह सिंहासन से उठकर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। उन्होंने निवेदन कर उच्चासन पर विराजित किया। स्वयं नीचे बैठे। फिर निवेदन करने लगा-हे स्वामिन्! मुझे यथार्थ ऐसा उपदेश प्रदान करें जिससे मेरा दुख दूर हो सके।

मुनिराज बोले-हे राजन् संसार में जितने भी दृश्यमान पदार्थ हैं वे सभी निश्चित ही नष्ट होने वाले हैं, प्रत्येक प्राणी अपने किये हुए कर्मों के फलों का भोक्ता है। अतः विचार करो जब अपना शरीर ही अपना नहीं रहता तो अपने से भिन्न पुत्र, स्त्री आदि कैसे अपने हो सकते हैं। अतः सारे विकल्प जालों को छोड़ तुम निजात्मा की खोज में अपने उपयोग को लगाओ क्योंकि वह ही शाश्वत एवं अपनी वस्तु है। मुनि के

वचन सुन राजा को संतोष हुआ, उसके मन में संसार के प्रति वैराग्य एवं आत्म तत्त्व के प्रति रुचि जाग्रत होने लगी। राजा ने साधु को नमस्कार कर कहा-आपके वचनामृत से निश्चित ही मेरे मन का बोझ हल्का हुआ। धन्य हैं आप और आपकी कला। ऐसा कहते हुए उसने मंत्री को संकेत किया कि कलाकार को मुँह मांगा पारितोषक प्रदान किया जावे। इतना सुनते ही ब्रह्मगुलाल मुनि ने पिच्छी कमण्डलु उठाया और महल के बाहर जाने लगे। जब सैनिकों ने रोका और पूछा क्या कारण है, आप यूँ ही क्यों चले ? तब मुनिराज बोले - हे राजन्! दुनिया के कितने ही रूप बदले जा सकते हैं, किन्तु यह

Scanned by CamScanner

दिगम्बर रूप ऐसा रूप है जिसे एक बार धारण करने के बाद बदला नहीं जा सकता। इतना कहकर वे वन की ओर चले गए और आत्मसाधना में लीन हो गए।

55. चार मूर्ख

किसी गाँव में चार मूर्ख मित्र रहते थे। बिना विचारे जो किसी कार्य को करता है वह मूर्ख कहलाता है। ऐसे ही वे चारों मित्र एक दिन घूमते-घूमते गाँव के बाहर दूर निकल गए। जब उन्हें भूख लगी तब ध्यान आया अरे हमारे पास खाने के लिए तो कुछ सामग्री है नहीं। अब हम क्या करें ? तभी उन्होंने सामने खेत देखा जिसमें चने लगे हुए थे। अतः आपस में कहने लगे चलो चने खाकर ही अपना पेट भरें और खेत में घुसकर चने खाने लगे। तभी खेत का मालिक आया। उन चारों को देखकर सोचने लगा अरे! ये कौन है, इस तरह कैसे चने खा रहे हैं। इन्हें कैसे रोका जाये। उसने सोचा ये चारों तो हट्टे-कट्टे हैं और मैं अकेला। अतः कुछ युक्ति से काम लेना चाहिए नहीं तो मेरी फसल ही चौपट हो जायेगी।

वह कुछ विचार करता हुआ उनके पास पहुँचा और मीठे शब्दों में कहने लगा आप कौन हैं सज्जन हैं। कृपया अपना परिचय देने का कष्ट करेंगे। वे बोले तू कौन होता है हमारा परिचय पूछने वाला। तब विनम्रता से बोला मैं आपका सेवक हूँ। आपकी अच्छे से आव भगत सेवा कर सकूँ इसीलिए परिचय पूछता हूँ। उन्होंने सोचा ये हमारी सेवा करेगा अतः सभी ने अपना परिचय देना प्रारम्भ कर दिया।

सबसे पहले मूछों पर ताव देता हुआ पहला व्यक्ति बोला- मैं जमींदार ठाकुर समशेर सिंह हूँ ये सारी भूमि हमारे ही दादाओं की है। इतना सुनते ही किसान बोला-अरे ठाकुर साहब आप इस जमीन के मालिक होकर नीचे बैठकर चने खायें। अच्छा नहीं लगता। सामने ही आम का पेड़ लगा है आप उसके नीचे बैठकर इत्मिनान से चने खाइये मैं स्वयं आपके लिए तोड़कर दिए देता हूँ। ऐसा कहकर उसने चने के पेड़ों का गुच्छा तोड़ा उसके निकट पहुँचा। उसने भी सोचा उठकर आम के पेड़ के नीचे चला गया।

अब दूसरे ने अपना परिचय दिया मैं पंडित चेतराम पाण्डे। इतना कहना ही था कि वह तुरंत पण्डित जी के पैर पर गिर पड़ा और कहने लगा-भगवान् आप हमारे देवता और इस तरह बैठकर खायें अच्छा नहीं लगता अतः आप उस वट वृक्ष के नीचे पधारें। मैं चने और मठा अभी आपकी सेवा में हाजिर करता हूँ। कहते हुए उसने पंडित जी को जाकर चबूतरे पर बैठा दिया।

फिर तीसरे ने कहा मुझे नहीं जानते मैं सेठ कचौड़ीमल हूँ। किसान बोला-क्षमा करें आप भी सामने नीम के पेड़ के नीचे विराजिए। मैं शीघ्र ही आपकी सेवा में हाजिर होता हूँ। सेठ भी खुशी-खुशी नीम के पेड़ के नीचे जा बैठा। अन्त में चौथे ने अपना परिचय दिया। मैं नाई ठाकुर चिबटीराम हूँ, ऐसा सुनते ही किसान गरम हो गया। बोलने लगा-जमींदार साहब तो जमीन के मालिक ही हैं, पंडित जी हमारे देवता सारा खेत उन्हीं का है और सेठ जी हमें कर्ज, किराना न दें तो बच्चे भूखों मरेंगे। पर तेरी इतनी जुर्रत कि इनके साथ बैठकर मेरे

Scanned by CamScanner

खेत के चने खा रहा है। तूने धर्म कर्म का भी ध्यान न रखा और डंडा उठाकर उसकी पिटाई करने लगा। कहने लगे, तीनों मित्र किसान ठीक कर रहा है। कहाँ यह नीच जाति का नाई और कहाँ हम, पिटने दो। बाद में चना और मठा हमें ही मिलेगा। जब नाई खूब पिट गया तो उसने भागने में ही अपनी भलाई समझी और गाँव की ओर भाग गया।

फिर किसान सेठ के पास पहुँचा और कहने लगा कि जमींदार की कृपा से हमारा घर चल रहा है और पंडित जी के हम चरण धोकर भी पियें तो कम है मगर तुमने हमारे ऊपर क्या उपकार किया। हमें कर्ज भी दिया तो जमीन रख ली ऊपर से इतना ब्याज लगाया कि पूरी जिन्दगी में कर्ज चुका न सकें। फिर तुमने मेरे खेत में घुसने की हिम्मत कैसे की। उठाया लट्ठ और उसकी जमकर पिटाई करने लगा।

जमींदार और पंडित सोचने लगे कि किसान सही कह रहा है पिटने दो साले को हम दो बचे तो अच्छा स्वागत सत्कार होगा। वह भी पिटते-पिटते लहु लुहान हो गया तो वहाँ से भाग खड़ा हुआ। फिर किसान जमींदार के पास पहुँचा और कहने लगा पंडित जी तो हमारे कुल देवता जो कुछ सब उन्हीं का है किन्तु तू कहाँ का जमींदार, हमारी फसल आये न आये, तुझे तो लगान चाहिए, तेरे बाप दादा होंगे जमींदार तू कैसे घुसा मेरे खेत में और डंडा उठाकर उसकी भी पिटाई शुरु कर दी।

पंडित सोचने लगा बिल्कुल ठीक कर रहा है यह तो नाम का जमींदार है दो कौड़ी तो जेब में है नहीं और मूछों पर ताव देता

घूमता है। इसे भी पिटने दो। अब पूरे चना और मठा मुझे ही मिलेगा। बहुत जोरों की भूख भी लगी है और उसे पिटता हुआ देखता रहा। वह भी पिटकर वहाँ से भाग गया। पंडित जी अच्छे बढ़िया आसन लगाकर दुपट्टा संभाल कर बैठ गये और सोचने लगे अब निश्चित दान दक्षिणा भी मिलेगी और भर पेट भोजन भी। इतने में किसान पंडित जी के पास आया और सीधे चोटी पकड़ ली। पंडित जी चिल्लाये ये क्या कर रहा है नरक जाना है क्या ? पंडित जी का अपमान धर्म का अपमान है, छोड़ दे। किसान बोला-अरे! पंडित चोर की कोई जात नहीं होती। पहले ये बता अपने बाप का खेत समझ रखा है। और यह कहते हुए उसने पंडित जी की जमकर पिटाई कर दी। पंडित भी भागकर वहीं पहुँचा जहाँ तीनों मूर्ख अपने जख्मों पर घी और हल्दी को गर्म कर सिकाई कर रहे थे।

उसी समय वहाँ एक सज्जन पहुँचे तथा उनकी हालत को जानकर उसने कहा-तुम लोगों ने बहुत बड़ी गल्ती की है। पहले तो तुम्हें चोरी नहीं करनी थी, यदि चोरी की भी थी तो आपस में एकता से रहते, सो तुम रह नहीं पाए अतः इसी कारण तुम्हारी यह दुर्दशा हुई है।

56. दीपक और तलवार

भरत चक्रवर्ती के पास एक बार एक जिज्ञासु पहुँचा। उसे इस बात में संदेह था कि भरत चक्रवर्ती हैं, 96 हजार रानियाँ हैं, फिर भी इतना बड़ा तत्त्वज्ञ और सम्यग्दृष्टि कैसे? वह चक्रवर्ती के पास पहुँचा और कहा कि "प्रभु! मैं आपके जीवन का रहस्य जानना चाहता हूँ। मैं एक से परेशान हूँ आप 96 हजार को कैसे संभालते हैं?

Scanned by CamScanner

फिर भी निस्पृह और अनासक्त कैसे बने हो? चक्रवर्ती ने सुना और कहा तुम्हारी बात का जबाब मैं बाद में दूँगा, पहले एक काम करो मेरे रनिवास में घूम आओ और देखो वहाँ क्या-क्या है। एक बार देख लो फिर मैं बताऊंगा कि मेरे जीवन का रहस्य क्या है।

वह बड़ा प्रसन्न हुआ कि आज चक्रवर्ती के रनिवास में घूमने का मौका मिलने वाला है। जैसे ही वह जाने को हुआ तो चक्रवर्ती ने कहा सुनो ऐसे नहीं, उसके हाथ में एक दीप पकड़वाया गया। और कहा इस दीपक के प्रकाश में तुम्हें पूरे रनिवास का चक्कर लगाकर आना है, पर एक शर्त है, ये चार तलवारधारी तुम्हारे चारों ओर हैं। रास्ते में न तो दीपक बुझना चाहिए, न ही एक बूँद तेल गिरना चाहिए। यदि दीपक बुझा तो तुम्हारे जीवन का दीपक बुझ जायेगा और तेल गिरा तो तुम्हारी गर्दन भी नीचे गिर जायेगी। उसने सोचा फँस गये अब तो। पर क्या किया जाए चक्रवर्ती के साथ उलझा था और कोई मार्ग नहीं था। बड़ी सावधानी के साथ वह पूरे रनिवास का चक्कर लगाकर आया और जैसे ही चक्रवर्ती के पास पहुँचा, इससे पहले कि वह कुछ कहे, चक्रवर्ती ने पूछा बताओ तुमने क्या-क्या देखा?

उसने कहा महाराज तलवार और दीपक के अलावा और कुछ नहीं देखा तो चक्रवर्ती ने कहा कि ''यही है मेरे जीवन का रहस्य। तुम्हें ये भोग और विलास दिखते हैं मुझे अपनी मौत की तलवार दिखती है।'' यदि मौत की तलवार देखते रहोगे तो जीवन में कभी अनर्थ घटित नहीं होगा। हर व्यक्ति को ऐसी प्रतीति करना

चाहिए, हर व्यक्ति को अपने अंदर ऐसा विवेक जागृत करना चाहिए, ऐसा बोध हमारे अंदर प्रकट होता है तभी पाप से अपने आप छुटकारा मिल सकता है।''

57. राजा का त्याग

भारतीय वसुंधरा पर भोगों को त्याग कर योगी बनने की कहानी जितनी सुंदर है, उतनी ही महान् गौरव गाथा रण-बांकुरों वीर सपूतों के त्याग की कहानी भी है।

कहानी है कि एक राजा जिसका राज्य छिन गया है, जो अब भिखारी के वेष में दर-दर की ठोकरें खाते हुए अपने ही राज्य के एक गाँव में पहुँचा। गाँव का हाल देखकर राजा हैरान हुआ, चारों ओर भुखमरी, बीमारी, चेहरों पर हताशा, इससे भी अधिक हैरानी राजा को ये हुई कि एक भी जवान आदमी गाँव में नहीं दिखा, सभी बूढ़े आदमी और बेवा स्त्रियाँ ही नजर आयीं।

राजा से न रहा गया और एक दादाजी से पूछ ही लिया कि ''क्या इस गाँव में एक भी जवान बालक नहीं है।'' इतना सुनते ही दादाजी बोले-''तुम्हें नहीं मालूम मुसाफिर हमारे राज्य पर किसी बड़े राजा ने आक्रमण किया, चारों ओर देशभक्ति की लहर दौड़ गई और सभी वीर युवक रणभूमि में वीरगति को प्राप्त हुए।'' राजा ने फिर पूछा-''क्या कोई भी नहीं बचा''। वृद्ध कहने लगा-''राहगीर जन्मभूमि की प्रतिष्ठा में ही हम सबकी प्रतिष्ठा छिपी है, जिसकी धूल में लेटकर हम बड़े हुये हैं, जिसने हमें पीने को पानी और खाने को अन्न के साथ-साथ सुंदर मधुर फल दिये, उसकी सेवा और रक्षा से

Scanned by CamScanner

विमुख होना कृतघ्नता है।

हे मुसाफिर! माता और मातृभूमि के ऋण से मानव कभी उऋण नहीं हो सकता, इसलिए जन्मभूमि की रक्षा के लिये हमारे देश के लोगों ने अपने प्राणों का भी त्याग कर दिया।''

राजा की आँखों में आँसुओं का सागर तैरने लगा, वह विचार करने लगा-मुझे जिंदा या मुर्दा उपस्थित करने वाले को मिथला नरेश ने एक हजार स्वर्ण मुद्रायें देने की घोषणा कर रखी है, क्यों न इन असहायों को लेकर मैं स्वयं हाजिर हो जाऊँ और पुरुस्कार इन ग्रामीणों को दिलवा दूं, ताकि ये सुखी जीवन जी सकें।

दूसरे दिन राजा मिथलेश के सामने था, मिथलेश सकते में आ गया । जिसे मैं खोज रहा हूँ वह स्वयं मौत के मुँह में आ रहा है। मिथलेश अभी कौशल नरेश को देख ही रहा था कि कौशलेश बोला- ''हे मिथलेश! तुम्हें मेरा राज्य प्रिय था, वह तुम मुझसे छीन ही चुके हो, अब मेरी जान चाहते हो तो मैं हाजिर हूँ; लेकिन जो पुरुस्कार आपने मेरे ऊपर घोषित किया है, वह पुरुस्कार इन मेरे देशवासियों को दिया जाये, ताकि ये अपना दुःख दूर कर सकें।''

इतना सुनते ही ग्रामीण बुजुर्ग तो रोने ही लगे। पर मिथलेश भी राज्य सिंहासन पर बैठा न रह सका, ऐसा अभूतपूर्व प्रजा-प्रेम देखकर वह सिंहासन से नीचे उतर कर कौशल नरेश के गले लिपट गया और गद्-गद् कंठ से बोला-मुझे क्षमा करो राजन् और अपनी प्रजा का पालन करो, मैं तुम्हारा राज्य वापस करता हूँ। जिस देश का राजा अपनी प्रजा के कल्याण में अपना कल्याण समझता है, जो प्रजा

के दुःख-दर्द में साथ रहता है वही सच्चा शासक है।

राजा प्रजा-प्रेम के कारण अपने प्राणों को भी त्यागने पर उतारूं हो गया तो वह अपना खोया राज्य पा गया। इसी प्रकार यदि हम विषय-वासनाओं, कामनाओं, आकांक्षाओं का त्यागकर सकें तो अपनी आत्मा की भगवत्ता प्रकट कर सकते हैं।

58. नेक काम

एक बुढ़िया बस में खड़ी हिचकोले खा रही थी। सब सीट भरी हुई थीं। किसी को उस पर तरस न आ रहा था। तभी बस स्टॉप आ गया। एक लड़की और बस में चढ़ आई। उसे देखते ही एक युवक अपनी सीट से खड़ा हो लड़की से बोला, आप यहाँ बैठिये।

लड़की ने बुढ़िया का हाथ पकड़कर सीट पर बैठा दिया।

युवक ने खड़ी हुई लड़की से कहा- मैंने तो सीट आपके लिये छोड़ी थी।

लड़की मुस्कराई और बोली, कोई बात नहीं, वास्तव में बहिन से पहले माँ का स्थान होता है।

Scanned by CamScanner

[खण्ड-6]

59. अनोखा वैरागी

पोदनपुर के राजा विद्युतराज और उनकी रानी विमलमति का पुंत्र विद्युत्पथ किसी कारण अपने बड़े भाई से कुपित / नाराज होकर पाँच सौ योद्धाओं के साथ नगर से बाहर निकल गया और अपना विद्युतचोर नाम रखा। चोर शास्त्र के उपदेश से वह मंत्र तंत्र के विधान सीख गया। अतः शरीर को अदृश्य बनाना तथा बन्द किवाड़ों का खोलना आदि का अच्छा जानकार हो गया था।

जिस समय जम्बूकुमार अपनी नवविवाहित स्त्रियों के साथ बैठा था उसी समय वह विद्युतचोर उस घर में रत्न तथा धन आदि चुराने के निमित्त घुसा। उस समय जम्बूकुमार की माता जिनदासी जाग रही थी। उसे जागृत देख विद्युतचोर ने पूछा माँ तू इस तरह क्यों जाग रही है ? तब वह बोली मेरा एक ही बेटा है वह प्रातःकाल दीक्षा ले लेगा। ऐसा संकल्प करके बैठा है। इसी कारण शोक से युक्त हो, मैं जाग रही हूँ। तुम बुद्धिमान दिखाई देते हो, यदि तुम उसे उपायों के द्वारा इस हठ से निवृत्त कर सको तो मैं तुम्हें मन चाहा धन दे दूंगी।

माता की बात सुन विद्युतचोर जम्बूकुमार के पास पहुँचता है तथा आठ कथाओं के माध्यम से उसे विषय भोगों को ग्रहण करने के लिए आग्रह करता है। किन्तु जम्बूकुमार भी उसे प्रति उत्तर रूप कहानी के माध्यम से संसार की नश्वरता का बोध कराते हैं। जम्बूकुमार के वचन सुन उसकी माता, चारों कन्यायें और चोर संसार, शरीर तथा भोगों से अत्यन्त वैराग्य को प्राप्त हो जाते हैं तथा जम्बूस्वामी,

विद्युतचोर एवं उसके 500 साथी सभी सुधर्म गणधर के समक्ष समर्पित होकर संयम ग्रहण कर लेते हैं।

60. भक्ति में शक्ति

राजा जयकुमार के दरबार में कुछ मंत्री स्वभावतः द्वेष भाव रखा करते थे। किसी समय वे निज राज्य में प्रवेश कर रहे थे कि रास्ते में उन्होंने आम के पेड़ के नीचे बैठे एक दिगम्बर साधु को देखा। नगर में पहुँचकर राजा के समक्ष दरबार में उन्होंने जैन साधुओं की निन्दा करते हुए कहा-कि हे राजन् जैन साधु कभी भी स्नान नहीं करते उनका शरीर कुष्ठादि रोगों से घिरा रहता है।

नगर के बाहर एक साधु आए हैं उन्हें आप नगर में प्रवेश नहीं करने देना अन्यथा नगर में रोग फैल जायेगा।

यह बात उसी सभा में बैठा हुआ एक जैन श्रावक (मंत्री) सुन रहा था उसे यह उपहास सहन नहीं हुआ और उसने तुरन्त उठकर कहा-नहीं राजन् नहीं, ये झूठ बोल रहे हैं ऐसा नहीं है। हमारे साधु भले ही स्नान नहीं करते किन्तु उनका शरीर रोग रहित रहता है। निरन्तर उनके शरीर से सुगंधि फूटती रहती है। स्वर्ण जैसी काया चमकती रहती है।

राजा दोनों की बातें सुनकर असमंजस में पड़ गया। तब उसने कहा कि आप लोग विवाद न करें इस बात का निर्णय करने तथा साधु जी के दर्शनार्थ हम स्वयं ही कल सुबह जायेंगे। ऐसा कहकर सभा समाप्त कर दी गई।

जैन मंत्री सभा समाप्त होते ही सीधे नगर के बाहर स्थित

Scanned by CamScanner

मुनिराज के समीप पहुँचा तो क्या देखता है वास्तव में पूर्व कर्मोदय से मुनिराज की काया कुष्ठ रोग से घिरी हुई थी। कोढ़ से शरीर गल रहा था एवं अत्यन्त दुर्गन्ध आ रही थी।

धर्मभावना से अभिभूत हो वह मुनिराज के निकट पहुँचा एवं नमोऽस्तु कर दरबार का समस्त वृत्तांत कह सुनाया। तब मुनिराज बोले - वत्स तूने बिना देखे ऐसा क्यों कहा। तब जैन मंत्री बोला- सभी मुनिराज ऐसे ही होते हैं ऐसा राजा समझ लेता तो अनर्थ होता अतः मैंने धर्म की रक्षा के लिए ऐसा कहा है। अब आपको ही जिनशासन की रक्षा करनी है। गुरुवर कृपा करें।

महाराज बोले हम क्या कर सकते हैं ? देखो जो होगा सो देखा जायेगा, तुम निश्चिंत होकर घर जाओ। श्रावक नमोऽस्तु कर घर चला गया और इधर मुनिराज तीर्थंकर प्रभु की भक्ति में लीन हो गये तथा उन्होंने एकीभाव स्तोत्र की रचना प्रारम्भ की। ज्यों ही उन्होंने चौथा काव्य लिखा और भाव व्यक्त किए कि-हे प्रभु ''**जब** आप माता के गर्भ में आने वाले थे तब छः माह पूर्व से ही पृथ्वी स्वर्ण से भरपूर हो गई थी। जब मैंने आपको ध्यान के द्वारा अपने हृदय में बुलाकर विराजमान कर लिया है तब मेरी यह काया स्वर्णमयी हो जाये तो इसमें क्या आश्चर्य है।'' चौथा काव्य पूर्ण होते ही काया से रोग दूर भाग गया एवं क्षणमात्र में काया स्वर्ण के समान सुंदर हो गई।

दूसरे दिन जब राजा सभी मंत्रियों सहित उपवन में आया और मुनिराज के दर्शन किये तो उनकी वीतराग एवं स्वर्ण के समान तेजस्वी काया को देख अत्यन्त प्रसन्न हुआ एवं श्रद्धापूर्वक नमस्कार किया।

जिन मंत्रियों ने मुनिराज की निंदा की थी उनकी ओर देखकर राजा ने मंत्रियों से कहा-तुमने बहुत बड़ा पाप किया जो द्वेष के वशीभूत हो साधु को कोढ़ी बतलाया तुम्हें इस अपराध का निश्चित ही कठोर दण्ड दिया जावेगा। ऐसी बात सुनते ही दयालु मुनिराज बोले -हे राजन् इसमें इनका कोई दोष नहीं है क्योंकि वास्तव में कल तक मेरे शरीर में कोढ़ था। जो कि जिनेन्द्र भक्त श्रावक की श्रद्धा भक्ति एवं जिनेन्द्र भगवान् की कृपा से दूर हो गया आप इन्हें दण्ड न दें।

मुनिराज की समदष्टि एवं दयादृष्टि को देखकर राजा ने पुनः नमस्कार किया एवं मुनिराज से जैनधर्म के महत्त्व को सुनकर जिनधर्म अंगीकार कर सच्चे श्रावक के व्रतों को अंगीकार किया। उन मुनिराज को सभी जन वादिराज मुनिराज से सम्बोधित कर श्रद्धा पूर्वक शीश झुकाते हैं, नमन करते हैं।

61. रूपवान राजा

इन्द्र की सभा चल रही थी कि इन्द्र ने कहा अगर मनुष्यों में किसी का रूप सौन्दर्य देखना है तो सनत चक्रवर्ती का रूप देखो। उनके रूप के समक्ष हम देवों का भी रूप फीका लगने लगता है। इस बात को सुनने वाले दो देवों के मन में विश्वास नहीं हुआ। अतः उन्होंने सोचा क्यों न हम स्वयं धरती पर जाकर नेत्रों से साक्षात् चक्रवर्ती का रूप देख लें। ऐसा निर्णय कर दोनों राजा के राज्य में पहुँचे।

उस समय सनतकुमार व्यायामशाला में लाल मिट्टी में अभ्यास कर रहे थे। जैसे ही देवों ने रूप देखा तो सहज ही कह उठे-वास्तव

Scanned by CamScanner

में जैसा सुना था उससे कई गुना अधिक सुन्दर रूप धन्य है। यह शब्द जैसे चक्रवर्ती के कानों तक पहुँचे उसने पलटकर देखा तो पूछा आप लोग कौन है कहाँ से आये हैं ? उन देवों ने अपने आने का कारण बतला दिया। तब वह चक्री बोले अरे अभी तो मैं तालीम कर रहा हूँ यदि मेरा सही रूप देखना है तो दरबार में पहुँचना तब तक मैं स्नानादि कार्यों से निवृत्त हो वस्त्राभूषण से सुसज्जित होकर पहुँचता हूँ। देवों ने कहा ठीक है हम वहाँ भी शीघ्र ही पहुँचेंगे।

कुछ समय बाद राजदरबार में सिंहासन पर बैठे हुए सनतकुमार चक्रवर्ती को देखने पुनः देव पहुँचे, रूप देखा तथा नाक सिकोड़ते हुए, मुण्डी हिला दी और कहने लगे अब वह सौन्दर्य कहाँ जो पहले था। राजा ने पूछा क्यों क्या बात है ? क्या तुम्हें मेरा यह रूप पसंद नहीं आया? वे बोले राजन् अब सौन्दर्य कहाँ, पल-पल परिवर्तित होती सृष्टि में कुछ भी तो स्थिर नहीं है। आप एक स्वर्ण का थाल बुलवायें। थाल बुलवाया गया। देवों ने कहा-इसमें थूककर देखो। राजा ने थूक तो उस थूक में सैकड़ों कीड़े बिलबिलाने लगे। देवों ने कहा-हे राजन् यह काया कुष्ठ रोगों से ग्रसित हो गई है अब क्षण-क्षण यह सौन्दर्य नष्ट होता जा रहा है। ऐसा कहकर देव वहाँ से वापस चले गये और राजा विचारने लगा, अरे! अरे जिस देह को लेकर मैं अभिमान करता था, निरन्तर इसकी संतुष्टि में लगा रहता था, फिर भी यह देह रोगी हो गई। सही ही कहा है-''दुर्जन देह स्वभाव बराबर मूरख प्रीति बढ़ावे।''

राजा विचार करने लगा मुझे कुछ ऐसा करना चाहिए जिससे देह में विराजित शाश्वत चेतना आत्मा का उद्धार हो सके। ऐसा

विचार कर अपने पुत्र को राज्यभार सौंपकर उसने मुनि दीक्षा अंगीकार कर ली।

पुनः एक दिवस स्वर्ग में इन्द्र ने कहा-यदि साधु की निरीहता और तप की श्रेष्ठता का दर्शन करना हो तो सनतकुमार मुनिराज को देखना चाहिए। पुनः वहीं बैठे उन दोनों देवों के मन में आया इन्द्र जी कैसी बातें कर रहे हैं। समझ नहीं आता चलो धरती पर चलकर परीक्षा कर लेते हैं। अतः वे वैद्य का रूप बनाकर उस स्थान पर पहुँच गये जहाँ सनतकुमार मुनिराज ध्यान अवस्था में बैठे हुए थे। वे जोर-जोर से आवाज करने लगे दवाई ले लो, दवाई ले लो हर रोग की रामबाण औषधि, एक बार लगाओ, रोग दूर भगाओ। ऐसा बार-बार कहते हुए वह वहीं घूमने लगा। कुछ देर बाद मुनिराज ने आँखें खोल ली तो उन्हें वहीं वहीं घूमते देख पास बुला लिया। वे सोचने लगे हमारा काम तो हो गया। वे उनके पास रुक गए और और कहने लगे हम वैद्य हैं आपके शरीर में कुष्ठरोग है ऐसा देखकर हम रुक गये, हमारे पास ऐसी दवा है जिसे लगाते ही क्षण में सारा रोग दूर हो जायेगा। आप कहें तो शीघ्र ही उपचार प्रारम्भ किया जावे।

तब मुनिराज बोले-भैय्या दवा तो मुझे भी चाहिए लेकिन इस रोग की नहीं। दूसरा जो भयंकर रोग है उसकी हो तो बताओ। बताइये महाराज कौन-सा रोग ? हमारे पास तो सभी रोगों की दवाई है। तब मुनिराज बोले-अनादिकाल से हमारे साथ जन्म, जरा और मृत्यु रोग लगा है उसकी दवाई हो तो बतायें। क्योंकि शरीर का रोग तो कर्माश्रित है और शरीर छूटते ही छूट जायेगा। किन्तु ये तीनों रोगों का नाश करने की दवा बतायें तो अच्छा होगा। इतना सुनते ही दोनों

Scanned by CamScanner

देव हाथ जोड़कर खड़े हो गये और कहने लगे महाराज इस रोग की दवा तो आपके ही पास है हम जैसों के पास कहाँ। हमें क्षमा करें, हम आपकी परीक्षा लेने आये थे। धन्य हैं आप, आपकी निरीहता और आपका तप। ऐसा कहकर देव जय जयकार करते हुये वापस चले गए। आत्मसाधना में लीन होकर सनतकुमार मुनि ने कुछ ही दिनों में समस्त कर्मों को नाश कर मुक्ति का लाभ प्राप्त किया।

सारांश- हमें शरीर, रूप आदि को निमित्त बनाकर घमण्ड, मद नहीं करना चाहिए तथा अपने शरीर को धर्मध्यान में लगाते हुए आत्म निर्मलता की दिशा में पुरुषार्थ करना चाहिए।

62. भावना का चमत्कार

देवपद, खेवपद नाम के दो बालक अपना जीवनयापन कर रहे थे। बचपन से ही माता-पिता ने उन्हें धर्म के संस्कार दिये थे। संस्कारित वे बालक प्रतिदिन मंदिर जाते एवं शास्त्रसभा में बैठकर प्रवचन सुनते थे। एक दिन प्रवचन में सम्मेदशिखरजी सिद्धक्षेत्र का महत्त्व सुना तभी से उनके मन में शिखरजी के दर्शन की तीव्र अभिलाषा होने लगी। पर वे यह विचार कर कि यह संभव नहीं हो सकेगा, मन मारकर रह जाते थे।

एक दिन उस नगर के सेठ जी ने सम्मेदशिखर जाने का मन बनाया तथा घोषणा की कि जो भी नगरवासी हमारे साथ चलना चाहे वह साथ में चल सकता है। दोनों बच्चे भी सेठ जी के पास पहुँचे और उनके सामने अपनी भावना रखी तथा यह भी कह दिया हमारे पास कुछ भी पैसा नहीं है। अतः हम आपकी सेवा चाकरी करेंगे। बदले में

आप हमारे लिए दो वक्त का भोजन दे देना।

सेठ जी ने दोनों को साथ चलने की अनुमति दे दी। अतः खुशी खुशी वे अपनी माँ के पास पहुँचे। उनसे आशीष लेकर सेठ जी के यात्रा संघ के साथ शिखरजी की ओर चल पड़े। बैलगाड़ी आदि से यात्रा होने से लगभग एक माह बाद सेठ जी संघ सहित शिखरजी पहुँचे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने दोनों बच्चों को बुलाकर कहा-हम लोग रात्रि में ही तीन बजे गिरिराज सम्मेदशिखर जी वंदनार्थ जायेंगे। अतः तुम दोनों को यहाँ नीचे रहकर सारी सामग्री की रक्षा करनी है तथा भोजन की सामग्री तैयार करके रखनी होगी। सेठ जी का आदेश सुनकर दोनों भाई दंग रह गये। बहुत दुखी हुए और सोचने लगे कि यह क्या ? हम लोग कैसे वंदना करेंगे ? फिर भी आज्ञा तो पालनी ही थी।

कुछ दिन व्यतीत होने पर जब संघ वापस जाने के लिए तैयार होने लगा तब दोनों बच्चों ने सोचा कि अरे हमने तो अभी एक भी वंदना नहीं की। क्या करें, सेठ जी से कैसे कहें? अतः दोनों भाइयों ने योजना बनाई और रात्रि में जब सब सो गये तो दोनों बच्चे चुपचाप वंदना के लिए निकल पड़े। सेठ जी भी नियत समय अनुसार वंदना को निकल गये। जैसे ही वे सर्वप्रथम गौतम गणधर की टोंक पर पहुँचे तो उनकी आँखें खुली की खुली रह गईं। उन्होंने क्या देखा कि किसी ने टोंक पर रत्नों की राशि (पुंज) चढ़ाये हुए हैं। सेठ सोचने लगे मुझसे अधिक धनवान ऐसा कौन-सा सेठ आया है जिसने रत्न चढ़ाये। आगे बढ़ते बढ़ते उसने पूरी वंदना क़ी तो सभी टोंक पर रत्नों के दो-दो ढेर लगे मिले।

Scanned by CamScanner

सेठ जल्दी-जल्दी वंदना कर नीचे आया तथा धर्मशाला के मैनेजर को बुलाकर पूछा-बताओ ऐसा कौन-सा सेठ यहाँ आया है जिसने रत्नों से शिखरजी की वंदना की। मैनेजर बोला-मालिक आपके सिवाय और कोई सेठ यहाँ नहीं आया आपको भ्रम हुआ है। लेकिन सभी यात्रियों ने रत्नों की बात की तो खोज होने लगी कि सेठ जी के पहले कौन वंदना करने गया। किसी कर्मचारी ने दोनों बालकों को ऊपर जाते हुए देख लिया था। अतः उसने बताया कि आपके कर्मचारी वे दोनों बालक देवपद व खेवपद वंदना करने गए थे। उन्होंने बुलाकर पूछा तो दोनों ने मुण्डी नीची कर ली और हाथ जोड़कर जवाब दिया कि हमारे मन में वंदना के तीव्र भाव थे, चूंकि आज संघ लौटने वाला है और हमारी एक भी वंदना नहीं हुई थी। अतः आपकी आज्ञा लिए बिना ही हम लोगों ने रात्रि में वंदना कर ली थी। किन्तु भोजन पूर्णतः तैयार है फिर भी आप हमें क्षमा करें।

तब सेठ जी ने पूछा ये तो बताओ तुमने भगवान् के चरणों में क्या चढ़ाया ? तो सहज रूप में बता दिया कि हम जब घर से आ रहे थे तो माँ ने कुछ ज्वार के दाने हमारे पास रख दिये थे तो चावल न होने की वजह से हमने वे ही दाने एक-एक मुट्ठी टोकों पर चढ़ाये थे। सेठ जी ने कहा तुम झूठ बोल रहे हो सही सही बताओ क्या चढ़ाया। वे कहने लगे सेठ जी विश्वास कीजिए, यदि विश्वास नहीं होता तो हमारे पास अभी भी थोड़ी सी ज्वार बची है सो आपको दिखा देते हैं। उन्होंने अपने पास रखी ज्वार निकालकर सेठ जी को दिखा दी। ज्वार देखते ही सेठ जी सारा मामला समझ गए कि इनकी भक्ति और आस्था के प्रभाव से ही वे ज्वार के दाने मोती बन गए।

सच्ची भक्ति और श्रद्धा तो इनकी थी। सेठ जी की आँखों में आँसू आ गए और उन्होंने दोनों बच्चों को अपने गले से लगा लिया।

तथा आगे चलकर अपनी सारी सम्पत्ति उन्हीं बालकों को देकर स्वयं ने गृह त्याग कर संयम को अंगीकार किया। सुनते हैं आगे बालकों ने संपत्ति का खर्च धर्म क्षेत्र पर करते हुए, सैकड़ों जिन प्रतिमा, जिनालयों का निर्माण किया। देवगढ़ ललितपुर में बनी प्रतिमाएँ उन्हीं के द्वारा स्थापित की गईं हैं ऐसा इतिहास मिलता है।

सारांश : प्रतिदिन मंदिर जाना चाहिए एवं जिनवाणी का अध्ययन करना चाहिए। मंदिर जी अथवा जिनदर्शन को कभी भी खाली हाथ नहीं जाना चाहिए। अपनी श्रद्धा को मजबूत रखना चाहिए।

63. कुलभूषण-देशभूषण

इनकी शिक्षा प्राप्त करने की उम्र हो चुकी है ऐसा विचार कर माता-पिता ने दोनों बालक देशभूषण और कुलभूषण को गुरुकुल में भेज दिया। दोनों बालकों ने मन लगाकर गुरु से नीतिवाक्य, अस्त्र-शस्त्र चालन एवं अन्य विषयों पर शिक्षा प्राप्त की तथा शिक्षा पूर्ण होने पर वापस घर जाने का निवेदन किया। गुरु से आशीर्वाद ले घर सूचना पहुँचा दी गई कि अमुक दिन हम आयेंगे।

सारे नगर को दुल्हन की भाँति सजाया गया। अपने-अपने घरों के समक्ष महिलायें आरती लेकर खड़ी थी। आखिर क्यों न हो बहुत दिनों बाद भावी राजा अर्थात् राजकुमार नगर में पधार रहे हैं। इधर रथ जैसे ही मुख्य द्वार से प्रवेश किया कि दोनों भाइयों की नजर

Scanned by CamScanner

सामने की गैलरी (छत) पर खड़ी एक अत्यन्त सुन्दर कन्या पर पड़ी। जिसे देखते ही दोनों क्षण मात्र में मोहित हो गये और उस कन्या से मैं ही विवाह ऐसा सोचने लगे। उधर आगे बढ़ता हुआ रथ जैसे ही महल के द्वार पर पहुँचा तो उन्होंने देखा कि वही कन्या उनके माता-पिता के साथ हाथ में आरती लेकर खड़ी है। रथ से उतरते ही माँ ने उस कन्या का परिचय देते हुए कहा-बेटा ये तुम्हारी बहन है जिसका जन्म तुम्हारे गुरुकुल जाने के पश्चात् हुआ। बहुत दिनों से इसकी आँखें अपने युगल भाईयों को देखने के लिए तरस रहीं थीं। आज तृप्त हुईं।

यह बात सुनते ही दोनों को आत्मग्लानि होने लगी। वे सोचने लगे धिक्कार है इस विषयवासना को जिसे योग्य-अयोग्य का विचार नहीं रहता। हमारी सगी बहन के विषय में हमने ऐसा विचार किया। तत्क्षण उन्हें संसार, शरीर, भोगों से वैराग्य उत्पन्न हुआ और उन्होंने वन में जाकर मुनि दीक्षा अंगीकार की एवं घोर तप करते हुए कुंथलगिरि सिद्धक्षेत्र से मुक्ति का लाभ प्राप्त किया।

64. सुकुमाल मुनि

करोड़ों की धन सम्पदा, बंगला, गाड़ी, नौकर-चाकर होते हुए भी सेठानी यशोभद्रा उदास एवं दुखी रहती थीं। कारण उनकी कोई संतान नहीं थी। बिना दीपक के मकान में अंधकार के समान ही उसके मन में अंधकार छाया रहता था। उसे खबर थी कि एक अवधिज्ञानी मुनिराज नगर के बाहर उपवन में पधारे हैं। अतः वह उनके दर्शन हेतु वहाँ गई एवं उसने मुनिराज से पूछा-हे प्रभु! मेरे

संतान का सुयोग बनेगा या नहीं। तब मुनिराज बोले-तेरा पुत्र सुयोग होगा। वह अत्यन्त सुन्दर, धर्मात्मा और पापभीरू होगा। किन्तु पुत्र के जन्म की खबर सुनते ही पिता मुनिदीक्षा अंगीकार कर लेगा तथा तेरा पुत्र भी मुनि दर्शन कर अथवा उनके वचन सुनते ही घरवार त्याग कर दीक्षा धारण करेगा। यह बात सुनते ही रानी हर्ष और विषाद दोनों से युक्त हो गई।

कुछ ही दिनों में उसने गर्भ धारण किया तथा पति से इस बात को छुपाये रखा कि कहीं सुनते ही वे दीक्षा न ले लें। पुत्र जन्म के बाद एक दिन सेठ जी की कोठी के निकट तालाब में दासी को बालक के कपड़े धोते हुए देख एक ब्राह्मण ने सोचा सेठ जी के यहाँ पुत्र हुआ है अतः कुछ याचना करनी चाहिए। अतः उसने सेठ जी से निवेदन किया कि आपके आँगन में पुत्र उत्पन्न हुआ है अतः आप कुछ दान दक्षिणा दें। तब सेठ को ज्ञात हुआ तब उसने पुत्र का मुख देखकर मुनिराज की दीक्षा ग्रहण कर ली।

पति के वैराग्य से दुखी सेठानी पुत्र का बड़े लाड़-प्यार से पालन पोषण करने लगी एवं पुत्र के लिए स्वर्णमयी एक सर्वतोभद्र महल तैयार करवाया उसके चारों ओर चांदी के बत्तीस महल तैयार करवाये तथा सुकुमाल को किसी भी प्रकार का कष्ट न हो ऐसी सभी व्यवस्थायें महल के भीतर ही की गईं थीं। सुकुमाल के युवा होने पर नगर में सुन्दर-सुन्दर कन्याओं से उसका विवाह कर दिया गया।

एक दिवस एक व्यापारी रत्न कम्बल विक्रय के उद्देश्य से नगर राजा के पास पहुँचा। राजा ने अच्छा मूल्य सुन अपनी अपनी असमर्थता व्यक्त की तब तक व्यापारी यशोभद्रा सेठानी के महल में

Scanned by CamScanner

पहुँचा। उसने वह कम्बल अपने सुकुमाल के लिए खरीद लिया। सुकुमाल को वह कम्बल चुभता था अर्थात् कठोर लगा। अतः यशोभद्रा ने उस कम्बल के छोटे-छोटे टुकड़े करवाकर अपनी बहुओं के लिए जूतियाँ बनवा दी।

एक बार छत पर रखी जूती को कौवे ने खाद्य सामग्री समझकर मुँह में दबा लिए और उड़ता हुआ राजमहल के छत पर छोड़ दिया। राजा ने छत पर पड़ी जूती देखी तो वह उस पर लगे रत्न कम्बल को पहचान कर विचार करने लगा। यह जूती कहाँ से आयी पूछने पर पता चला यह जूती सुकुमाल की स्त्री की है। तब राजा को यह बात सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ और उसे सुकुमाल से मिलने की इच्छा हुई और वह स्वयं सुकुमाल के घर की ओर चल पड़ा। यशोभद्रा को राजा के आगमन की सूचना मिलते ही वह उनके स्वागत हेतु तैयार हुई। माँ-बेटे दोनों ने अतिशय सत्कार किया। राजा के लिए स्वर्णमयी सिंहासन लगाया गया। प्रीतिवश उसने सुकुमाल को भी अपने साथ बिठा लिया। फिर राजा से निवेदन किया कि आप आज हमारे यहाँ ही भोजन करके जायें। राजा की स्वीकृति मिली और राजा और सुकुमाल भोजन करने बैठे। इस मुलाकात में सुकुमाल की भिन्न-भिन्न चेष्टाएँ देखकर राजा ने उसकी माँ से कहा- लगता है सुकुमाल को कुछ व्याधि है। माँ ने पूछा-ऐसा आपने कैसे जाना? राजा बोला- सिंहासन पर बैठते समय स्थिर न बैठकर ये हिलडुल रहे थे, दूसरा जब आपने आरती की थी इसकी आँखों से अश्रु गिरने लगे थे तथा जब आपने खीर परोसी तो यह एक-एक चावल बीनकर खा रहा था इसलिए ऐसा प्रतीत हुआ। सेठानी मुस्कराई और बोली- राजाजी बात

ऐसी है कि मेरा पुत्र अत्यन्त कोमल दिव्य गादी पर सोता एवं बैठता है। आज हमने मंगल स्वरूप जो सरसों के दाने डाले थे वे इसे चुभ रहे थे। इसकी कठोरता से इसका आसन चलायमान हो रहा था। आँखों से पानी आने का कारण यह है कि यह हमेशा रत्न दीपक के प्रकाश में ही रहता है प्रथम बार ही घी का दीपक इसके समक्ष आया था अतः उसकी लौ से उत्पन्न ताप को सहन न कर सका। तीसरी बात यह है कि प्रतिदिन कमल बंद होने के पूर्व ही चावलों को कमलों के बीच रख दिया जाता था। उसकी गर्मी से पके हुए चावलों को प्रातःकाल निकालकर उससे बनी खीर इसे खिलाई जाती थी।

आज आपके आने की सूचना मिलते ही उस खीर में कुछ सामान्य चावल मिला दिये गए सो यह बालक उन खीर के दानों को बीन-बीन कर खा रहा था। अतः राजन् आप जिसे कोई बीमारी समझ रहे हैं यह कोई बीमारी नहीं है। राजा इन सब बातों को सुन बड़ा भारी आश्चर्य को प्राप्त हुआ। तब उसने राजकुमार का नाम अवन्ती सुकुमाल रखा और आनंदपूर्वक राजमहल की ओर चला गया।

एक दिन सुकुमाल के मामा यशोभद्र मुनि ने अवधिज्ञान से जान लिया कि सुकुमाल की आयु बहुत थोड़ी बची है। अतः उसे संयम पथ पर चलने का उपदेश देना चाहिए। किन्तु पहुँचे कैसे सेठानी ने मोह के कारण मुनि दर्शन से रोकने हेतु पूर्ण व्यवस्था जो कर रखी है। फिर भी कुछ उपाय अवश्य करना चाहिए। ऐसा विचार कर चतुर्मास स्थापना के दिवस ही सेठानी के नगर के निकट बने चैत्यालय में रुक गये। जब सेठानी का मुनि आगमन की खबर लगी

Scanned by CamScanner

तो वह शीघ्र ही मंदिर पहुँची एवं मुनिराज से विहार का निवेदन किया।

तब मुनिराज बोले- आज तो स्थापना दिवस है आगे समय शेष नहीं है अतः मैं यहीं चतुर्मास स्थापना करुँगा। ऐसा कहकर वहीं प्रतिमायोग धारण कर बैठ गये। चतुर्मास पूर्ण होने पर सुकुमाल की आयु तीन दिन शेष जानकर उन्होंने तीन लोक प्रज्ञप्ति का पाठ किया जिसमें स्वर्ग लोक का वर्णन सुन सुकुमाल को जातिस्मरण हो आया और उसने आत्मकल्याण हेतु संयम मग्न होने का मन बनाया तथा पत्नियों की साड़ियों की गाँठ बाँधकर उसकी रस्सी बनाकर नीचे उतरकर सीधे मुनिराज के पास पहुँचा। दीक्षा का निवेदन किया। तब मुनिराज बोले-तुमने ठीक ही विचार किया क्योंकि अब तुम्हारी आयु तीन दिन की शेष है। अतः दीक्षा लेकर घोर एकान्त वन में ध्यान लगाने हेतु गए।

वहीं पर उनकी पूर्व भव की भाभी जो सियालनी बनी थी पूर्व बैर का स्मरण आने पर उनका पैरों से भक्षण करने लगी। तब शरीर की अशुचिता और क्षणभंगुरता का ध्यान कर सुकुमाल मुनि आत्म ध्यान में लीन रहे और अंत में शरीर त्याग कर सर्वार्थसिद्धि विमान में जन्म लिया।

65. अद्भुत अवधूत का अपरिग्रह

भोजन के उपरान्त घर से दुकान जाते समय भिखारियों के लिए रोटियाँ साथ ले जाता था। दो-दो रोटी गर्म सब्जी के साथ एक-एक कागज में रोल करके, पुड़िया बनाकर, थैले में रखकर, रास्ते में

कोई भिखारी मिलता, उसे एक पुड़िया देता जाता था। कई भिखारी तो रोज के परिचित भी हो गये थे।

एक दिन एक जवान दीन-हीन वेशभूषा में एक भिखारी रास्ते में चलता हुआ मिला। मैंने उत्साह से उस नये व्यक्ति के पास जाकर, बड़े प्रेम से, कहा कि, 'गर्मागर्म रोटी सब्जी घर की बनी हुई है, खाने के लिए ले लो।

उसने कहा 'अभी का भोजन तो हो गया है, सो नहीं लेना है।'

मुझे आश्चर्य हुआ। आज तक किसी ने भी बनी- बनाई रोटी लेने से इनकार नहीं किया। मैंने अनुरोध के स्वर में कहा, 'ले लो, शाम को खाने में काम आ जायेगी।'

रास्ते के बीच ही वह रुक गया। मैं भी रुक गया। उसने नीचे से ऊपर तक मुझे देखा। मैंने आशान्वित होकर मुस्कराते हुए उसे देखा।

वह बोला- 'मेरी उम्र 35 वर्ष की हो गई है। बचपन से ही माँ-बाप को देखने की, याद नहीं। जिसने अब तक भोजन दिया है, वही भगवान शाम को भी देगा।' मैंने पूछा, नहीं मिलेगा तो...? उसने समाधान दिया 'मांगता नहीं, कोई देगा तो खा लेंगे, अन्यथा पानी पीकर पेट भर लेंगे।'

बोलचाल से लगा कि पढ़ालिखा है। मैंने फिर निवेदन किया उत्सुकता के साथ, 'कुछ रुपया पैसा ले लो।' उसने हंसकर कहा, 'इसकी सुरक्षा की चिन्ता से जीवन दुःखी और अशान्त हो जायेगा।'

मैंने बात आगे बढ़ाई- 'नौकरी करोगे? कोई काम करोगे?'

Scanned by CamScanner

उसने गम्भीरता के साथ कहा, 'यह पराधीनता आप सब को मुबारक हो। काम के नाम से कोई दुःखी प्राणी मिल जाता है तो उसकी सेवा कर लेता हूँ, उसकी रोटी पानी की व्यवस्था कर देता हूँ।'

अचानक वह चलने लगा। दिल में आया कि दौड़कर उसके पैर छू लूँ। यह तो भिखारी नहीं अवधूत साधु है। लगा कि, न जाने किस वेश में मिल जाये भगवान्। धन-सम्पदा के संचय / संग्रह की दौड़ में भाग रही इस दुनियाँ में ऐसे अपरिग्रही भी हैं, यह उस मुलाकात से ज्ञात हुआ, निष्परिगृही अवधूत, वह सचमुच! अद्भुत था।

66. ईमानदार इन्सान का इम्तिहान

करीब 20 वर्ष पहले की घटना है। असम के एक सुन्दर शहर तेजपुर में रात्रि 9 बजे मन्दिर में प्रवचन करके प्रतिदिन की भाँति पत्नी के साथ घर पैदल ही जा रहा था। दुकान में दिनभर की बिक्री के रु. 4500.00 एवं कुछ जरूरी कागजाद एक सफेद छोटी थैली में रखकर कमर में बाँयी ओर धोती के साथ खोंस लिये थे। आपस में बातें करते-करते आराम से जा रहे थे। घर थोड़ी दूर पर था। रास्ते में सन्नाटा था। रास्ते में बाँयी तरफ से चल रहे थे। घर पहुँचने से कुछ पहले ही अचानक कमर पर हाथ लगा तो मालूम हुआ कि थैली अपने स्थान पर नहीं है। रास्ते में थैली कब, कहाँ गिर गई कुछ पता नहीं। एकाएक सन्न से घबराहट से हाथ पैर सुन्न होने लगे। पत्नी ने धीरज बँधाया एवं खोजने वापस चलने को कहा। रास्ते में जिस तरफ से आये थे पुनः उसी ओर से टार्च जलाकर देखते खोजते चले पर थैली कहीं नहीं मिली। रुपयों से भी अधिक मूल्यवान तो कागजाद थे। हताश भारी मन से घर लौटने लगे। लौटते में भी टार्च जलाकर

रास्ते में खोजते ही जा रहे थे।

तभी दो साइकिल के साथ चार व्यक्ति मिले। हमें रोककर उनमें से एक ने पूछा कि हम क्या खोज रहे हैं? हमने शोक सन्ताप के स्वर में थैली के गिर जाने की बात कही तो उन महानुभाव ने थैली हमें दिखाई तो हमने पहचान की स्वीकृति दी। थैली देखकर जान में जान तो आई पर अभी वह उन्हीं के हाथ में थी। शेष 3 व्यक्ति कुछ नहीं बोल रहे थे, मात्र देख रहे थे।

उस आसामी सज्जन ने हमें थैली दे दी और कहा कि रुपये गिनकर देख लेवें कि ठीक तो हैं न। हमने कहा कि क्या गिनना है, लेना ही होता, तो देते ही क्यों? हमने उन सबका धन्यवाद किया, आभार प्रकट किया। उस ईमानदार इन्सान ने बताया कि थैली तो जाते में ही मिल गई थी। थैली के मालिक की सही पहचान करने की खोज भी उनको थी। बातों से लगा कि जिनको थैली मिली थी वे ही उसे लौटाने की जिद करके वापस पैदल चल कर आ रहे थे।

जी तो किया कि उस ईमानदार इन्सान के पैर छू लें। हमने पुरस्कार के रूप में कुछ देना चाहा, तो उन्होंने जो कहा वह आज भी दिल दिमाग में बैठा है। कहा कि लेना ही होता तो देते ही क्यों? यह तो एक इम्तिहान था जिसमें पूर्ण संख्या प्राप्त कर पाये, यही पर्याप्त है। धरती पर आज भी देवतुल्य मानव हैं पर संख्या भले ही अल्प हो।

67. व्यसन की आग : सब करदे राख

बहुत समय पहले की बात है, जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सद्ऋतु नाम का एक नगर था। उस नगर में भावन नाम का एक

Scanned by CamScanner

बनिया रहता था। हरिदास उसका इकलौता पुत्र था।

भावन के पास अतुल धन-सम्पत्ति थी किन्तु फिर भी उसे विदेश जाकर और अधिक धन कमाने की लालसा थी। उसकी पत्नी उसे विदेश जाने को मना करती थी पर भावन अपनी लालसा नहीं रोक पा रहा था। अपनी चार करोड़ सोने की मुद्राएँ पुत्र हरिदास को धरोहर के रूप में सम्हलाते हुए उसे जुआ-मदिरा आदि व्यसनों से दूर रहने का उपदेश देकर वह और अधिक धन कमाने के लिए विदेश चला गया।

हरिदास कच्ची उम्र का था। अभी उसमें हेय-उपादेय, उचित-अनुचित, लाभ-हानि का निर्णय करने की क्षमता विकसित नहीं हुई थी। समुचित देख-रेख, सम्यक् रोक-टोक, अनुशासन व अंकुश न होने से तथा इतनी अधिक धन-राशि मिल जाने से वह किशोर व्यसनों की ओर उन्मुख हो गया।

धीरे-धीरे हरिदास ने जुए की लत और मदिरा-पान में अपना सारा धन गँवा दिया। पास का धन चुक गया तो हरिदास कर्ज़ा लेने लगा। कुछ ही दिनों में उस पर काफी कर्ज़ा चढ़ गया। लेनदार परेशान करने लगे। हरिदास को धनप्राप्ति का कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था।

जैसा आचार-वैसा विचार, जैसी क्रिया-वैसा व्यवहार। व्यसनों में डूबा हुआ व्यक्ति धन पाने के लिए मेहनत-मजदूरी नहीं करना चाहता। वह धन कमाने की कोशिश नहीं करता। वह तो बिना प्रयास, अनायास ही धन पाना चाहता है। इसलिए व्यसनों में रत

व्यक्ति चोरी-डाका, धोखा-फरेब आदि कुटेवों में ही उलझता-फँसता जाता है। अंकुश के अभाव में एक अवगुण नित नये अवगुणों को जन्म देता है।

हरिदास के साथ भी ऐसा ही हुआ। व्यसनों के कीचड़ में फँस जाने से उसका हर कदम, हर आचरण उसे और नये-नये व्यसनों के गहरे दलदल में फँसाता जा रहा था। अपना कर्ज़ चुकाने व खर्च चलाने के लिए उसने चोरी का मार्ग चुना। उसने राजमहल में चोरी करने की योजना बनाई। सही है, जहाँ अथाह धन-सम्पत्ति हो वहाँ चोरी करना आसान भी है और लाभदायक भी। सागर में से सौ-पचास घड़े पानी निकाल लिये जाएं तो सागर पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा?

हरिदास ने अपने घर से राजमहल तक एक गुप्त सुरंग बनाई। उस सुरंग से जाकर वह प्रतिदिन अपनी इच्छानुसार धन चुराकर लाने लगा और व्यसनों में गँवाने लगा।

कुछ समय बाद वणिक भावन धन कमाकर अपने घर लौटा। हरिदास उस समय अपने घर में नहीं था। भावन ने अपनी पत्नी के कुशल-क्षेम पूछकर जानना चाहा कि बेटा हरिदास कहाँ है?

माँ अपने बेटे की बुरी आदतों/व्यसनों से बहुत दुःखी थी। उसने पति से बेटे के व्यसनों व खोटे आचरण के बारे में बताते हुए कहा कि वह इस सुरंगमार्ग से राजमहल में चोरी करने गया है। भावन क्रोध व दुःख के कारण उत्तेजना से भर उठा। पुत्र के अनिष्ट की आशंका से घबराकर वह स्वयं उस सुरंग से उसे ढूंढने चल पड़ा।

Scanned by CamScanner

हरिदास राजमहल से चोरी कर धन लेकर लौट रहा था। सुरंग में अंधेरा था। सामने एक मनुष्य-आकृति को देखकर हरिदास ने सोचा कि वह जरूर कोई भेदिया है जिसे इस सुरंग-मार्ग का पता लग गया है। यह भेद खोल देगा तो मैं मारा जाऊँगा। अपनी मौत से भयभीत हरिदास ने बिना आगे-पीछे सोचे, बिना देखे-भाले उस मनुष्य-आकृति को तलवार से मौत के घाट उतार दिया। आकृति के स्पन्दन रहित हो जाने पर जब हरिदास ने प्रकाश करके देखा तो वह चौंक उठा, उसने पहचाना-अरे! ये तो मेरे पिता थे। पर ये यहाँ कैसे आ गये? सुरंग से बाहर आकर उसने माँ से पूछा तो पता चला कि पिता विदेश से लौट आये थे और उसे ही खोजने गये थे।

पिता का हत्यारा हरिदास दण्ड के भय से घर से भाग निकला और जंगलों में छिपता रहा, जहाँ हिंसक पशुओं का डर, भूख-प्यास आदि के असह्य दुःखों से वह परेशान हो गया। अन्त में दुःख और ग्लानि से पीड़ित हो जंगल में ही मर गया।

ओह! व्यसनों की आग समय की हवा से बढ़ती जाती है। यह आग धन-सम्पत्ति, मान-मर्यादा, ज्ञान-ध्यान, सन्तोष-धैर्य, प्रेम-विश्वास सब कुछ लील जाती है। इन व्यसनों की आग में कुछ भी शेष नहीं रहता, बचता है तो सिर्फ दुःख, अपमान, क्लेश और पीड़ा-पश्चाताप-ग्लानि रूपी राख। व्यसनों से प्रारंभ में क्षणिक भौतिक सुख मिलता है किन्तु उनका अन्त कितना भयावह और दुःखद होता है।

68. अपना जीवन सबको प्यारा

बात कुछ पुरानी है। भरतखण्ड में राजपुर नाम का एक

अत्यन्त सुन्दर नगर था। वहाँ राजा मरुत्वान राज्य करता था। वह क्रियाकाण्ड तथा बलियज्ञ में बहुत विश्वास करता था। वह सदैव इस प्रकार के यज्ञ करवाता रहता था।

एक बार की बात है। राजा यज्ञशाला में कोई यज्ञ करवा रहा था। उस यज्ञ का प्रधान याजक (यज्ञ कराने वाला) संवर्त नाम का व्यक्ति था। वह राजा को यज्ञ क्रियाओं की विधि बताता रहता था। यज्ञशाला के पास ही सैकड़ों दीन-हीन पशु लाकर बाँध दिये गये थे। वे बेजुबान पशु मरने के भय से काँप रहे थे।

उसी समय आकाश-मार्ग से गमन करने वाले नारद उधर से जा रहे थे। उन्होनें यज्ञशाला और उसके पास बंधे पशुओं को देखा। उन्हें पशुओं पर दया आई। वे आकाश मार्ग से उतरकर यज्ञशाला के पास जा पहुँचे। उन्होंने राजा मरुत्वान से पूछा- हे राजन् क्या कर रहे हो? इन निरपराध पशुओं को क्यों बाँध रखा है?

राजा ने बताया - मैं एक बलि यज्ञ करवा रहा हूँ, ये पशु उस यज्ञ में बलि देने के लिए एकत्र किये गये हैं।

यह सुनकर नारद बहुत दुःखी हुए। उन्होंने राजा से कहा- ओह राजन्! तुम नहीं जानते कि तुम कितनी हिंसा कर रहे हो और इसका फल क्या होगा?

अहंकार से चूर राजा मरुत्वान ने कहा- इस कार्य से मुझे जो फल मिलेगा वह तो समस्त शास्त्रों का जानकर यह संवर्त जानता है। मुझे पुण्य फल ही प्राप्त होगा।

नारद ने संवर्त से भी पूछा। तब संवर्त बोला-यज्ञ द्वारा अपूर्व

Scanned by CamScanner

नामक ध्रुवधाम प्रकट होता है जो जीव को स्वर्ग में अच्छे-अच्छे भोग दिलवाता है। यज्ञ में वेदी के बीच जो पशुओं का वध होता हैं, उससे पाप नहीं होता, यह ब्रह्मा ने पशुओं को बलि के लिए ही तो बनाया है। जो जिस कार्य के लिए बनाये गये हैं उस कार्य के लिए उनका उपयोग करने में दोष नहीं होता।

यह सुनकर नारद को मरुत्वान और संवर्त की बुद्धि पर बहुत तरस आया। वे उन्हें समझाते हुए बोले-तुम्हारा ऐसा मानना और कहना बिल्कुल गलत हैं। शास्त्र वह कहलाता है जो समस्त संसार के लिए हित का उपदेश दे। जो जीवहत्या / प्राणीहत्या का उपदेश दे वह शास्त्र कैसा? जिस प्रकार एक शिकारी द्वारा की गई हत्या गलत है और पाप का कारण है उसी प्रकार यज्ञ की वेदी पर की गई हत्या भी गलत है और अमानवीय है और पाप का कारण है। यदि ब्रह्मा ने पशुओं को यज्ञ में बलि के लिए ही बनाया है तो फिर तुम पशुओं से खेती, सवारी आदि अन्य काम क्यों कराते हो? यज्ञ में बलि का समर्थन करने वाले शास्त्रों की रचना किसी मांसाहारी व्यक्ति ने अपने स्वार्थ एवं स्वाद की पूर्ति के लिए कर दी है। आपको यज्ञ ही करना है तो बलियज्ञ नहीं धर्मयज्ञ करना चाहिये।

धर्मयज्ञ? धर्मयज्ञ कैसे ? मरुत्वान ने पूछा।

नारद ने बताया- सुनो आत्मा यजमान अर्थात् यज्ञ करने वाला है, शरीर वेदी है, तप अग्नि है, इच्छाएं समिधाएं (यज्ञ में जलाने की लकड़ी आदि सामग्री) हैं, चंचल मन उसका चढ़ावा है, इस प्रकार किया हुआ यज्ञ ही धर्मयज्ञ है। सन्तोष इसकी पूर्णता है और सिद्धपद इसका फल है।

इस पर मरुत्वान ने कहा- पर बलि यज्ञ से देवों की तृप्ति होती है, आपने जो यह धर्मयज्ञ बताया उससे देव कैसे तृप्त होगें?

नारद बोले-यज्ञ से देवों की तृप्ति होती है तुम्हारा यह सोचना भी गलत हैं। देवों को तो मनचाहा दिव्य आहार मिलता है, तब वे रक्त आदि से सना हुआ मांस क्यों खायेंगे? यदि देवता रक्त-मज्जा-दुर्गन्ध आदि से युक्त शरीर खाते हैं तो फिर उनमें तोता, कौए-श्रृगाल-कुत्ते आदि हिंसक जीवों में क्या समानता नहीं है?

इतना सनते ही यज्ञ कर रहे संवर्त आदि लोग नारद को मारने लगे। नारद अकेले थे और वे बहुत सारे थे। राजा मरुत्वान चुपचाप बैठा यह सब देखता रहा।

इतने में ही अपने दल-बल सहित भ्रमण को निकले अलंकारपुर के राजा दशानन उधर आ पहुँचे। उनके आगे चलने वाले अनुचरों ने आकर उन्हें नारद के संकट में पड़ जाने का समाचार सुनाया। उसको सुनकर दशानन क्रुद्ध हो उठे। उन्होनें अपने सैनिकों को शत्रुओं के घेरे से नारद को मुक्त कराने की आज्ञा दी।

दशानन के सैनिक बलि-यज्ञ करने वाले लोगों को मारने लगे। वे लोग इस अचानक हुए आक्रमण से घबरा गये, भयभीत हो गये। तब उनसे पूछा गया-जिस प्रकार आप लोगों को दुःख अप्रिय लगता है, सुख प्रिय लगता हैं उसी प्रकार पशुओं को भी लगता होगा न। सोचिये, जिस तरह आपको अपना जीवन प्यारा लगता है, उसी तरह इन पशुओं को भी लगता है। आप लोगों पर अभी जो इतनी-सी मार पड़ी उसी से आप लोग इतने दुःखी व भयभीत हैं तब शस्त्रों से

Scanned by CamScanner

मारे जाने पर इन बेजुबान-बेकसूर पशुओं की क्या दशा होती होगी, इन पर क्या बीतती होगी? जरा विचार कीजिये। क्या इन्हें जीने का अधिकार नहीं है?

तब घायल हुए दयालु नारद ने दशानन से कहा- राजन् आपका कल्याण हो आपने मुझे इन हिंसक लोगों के चंगुल से छुड़ाकर मुझ पर उपकार किया है।

अब आप इन पर भी दया कीजिये । राजन् यदि ये लोग हिंसायज्ञ / बलियज्ञ का त्यागकर धर्मयज्ञ में लगने का वचन दें तो इन्हें जीवनदान दे दीजिये।

नारद के दयापूर्ण वचन सुनकर राजा मरुत्वान आगे आये और हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए अत्यन्त विनम्रता से बोले- हे राजन् मुझ पर दया कीजिये। मैंने बहुत गलत काम किये हैं। अज्ञानवश मुझसे गलती हो गई। मुझे माफ कीजिये, अब मैं कभी ऐसे हिंसात्मक कार्य नहीं करुंगा।

नारद और राजा दशानन ने उन्हें क्षमा कर दिया और धर्ममार्ग-सन्मार्ग की ओर प्रवृत किया।

69. थोड़े के लिए बहुत हानि

किसी नगर में एक निर्धन और भाग्यहीन वणिक रहता था। निर्धन और भाग्यहीन होने के साथ वह कंजूस भी अव्वल दर्जे का था। मितव्ययता-किफायतशारी और कृपणता अथवा कंजूसी दोनों भिन्न हैं। कंजूसी कभी ठीक नहीं। कंजूसों का धन दूसरे ही उड़ाते हैं।

इस निर्धन वणिक ने बहुत प्रयास किये, पर धन उसे नहीं मिला। पेट भरना अलग बात है। पेट तो सभी भर लेते हैं। एक बार इस नगर के कुछ व्यापारी धन कमाने के लिए विदेश गए। यह भाग्यहीन वणिक भी उनके साथ हो लिया। दूर-देश जाकर सबने व्यापार किया। सबको खूब लाभ हुआ। इस बेचारे ने भी अपनी कृपण-वृत्ति से एक हजार स्वर्णमुद्राएँ जोड़ ली थी। क्रय-विक्रय समाप्त कर सब अपने देश को लौटने लगे।

मार्ग में एक नगर पड़ा। सब यहाँ ठहरे और अपने घर के लिए कुछ जरूरी चीजें खरीदी। एक कर्षापण (एक सिक्का जिसमें 20 काकिणी होती थी) भुनवाकर कुछ सामान इस निर्धन वणिक ने भी खरीदा। यथासमय सब आगे चल दिये। चलते-चलते एक जंगल में पहुँचे। कुछ देर विश्राम किया। वणिक ने अपनी मुद्राएँ सम्हाली, काकिणी गिनी तो उनमें एक काकिणी कम थी । उसने अपने साथियों से कहा- पीछे नगर में मैंने एक कार्षापण भुनवाया, उसमें एक काकिणी कम हो रही है। मेरी एक काकिणी या तो दुकान पर रह गई या कहीं रास्ते में गिर गई। आप लोग यहाँ रुकिए। मैं खोई हुई काकिणी लेकर उलटे पैरों वापस आता हूँ।

साथियों ने समझाया-अब पीछे लौटना व्यर्थ है। इतनी दूर निकल आये। एक काकिणी के लिए इतना पीछे लौटना बुद्धिमानी नहीं। फिर भी यह जरूरी नहीं कि वह मिल ही जाए। क्या खोई हुई चीज कहीं मिलती है ? दुकानदार के पास होगी, तो वह भी अब देने से रहा।

Scanned by CamScanner

वणिक नहीं माना। अन्त में साथियों ने कहा-तुम्हारी इच्छा। लेकिन हम तुम्हारी प्रतीक्षा यहाँ जंगल में नहीं कर सकते। हम तो चलते हैं। अगर मिल सके तो आगे किसी नगर या गाँव में मिल जायेंगे।

साथी आगे बढ़ गए। वणिक काकिणी खोजने पीछे लौटने लगा। उसने सोचा, साथ की इन मुद्राओं को कहाँ लिये फिरूँगा ? यहीं कहीं छिपा दूँ, लौटकर ले लूँगा। एक पेड़ के नीचे गड्ढा खोदकर वणिक ने सारी मुद्राएँ गाड़ दीं। ऊपर से मिटटी ढक दी और पहचान के लिए निशान बना दिया।

लौटकर वह दुकानदार के पास पहुँचा। बोला-यहाँ मेरी एक काकिणी गिर गई थी। मुझे वापस कर दो। दुकानदार साफ मुकर गया। बोला-यहाँ तो नहीं गिरी। तुमने मुझे एक कार्षापण दिया था और मैंने सामान देकर बची हुई काकिणी गिनकर तुमको वापस कर दी थी। अब मैं नहीं जानता, कहाँ गिरी ?

कहीं नहीं मिली खोई हुई एक काकिणी। बेचारा निराश लौटा। पहले स्थान पर गड़ी मुद्राएँ निकालने के लिए गड्ढा खोदा तो मुद्राएँ नदारद थीं। जिस समय उसने ये मुद्राएँ गाड़ी थीं, उस समय कोई दूर से देख रहा था, सो निकाल ले गया।

भाग्य का मारा बेचारा वणिक सिर पकड़कर बैठ गया और रोने लगा। रोने से क्या होता ? लुटा-पिटा घर लौटा और आपबीती सबको सुनाई। सुनकर सबने यही कहा- थोड़े के पीछे बहुत गँवा दिया। किसी की न माननेवाले इसी तरह पछताते हैं। एक काकिणी

के पीछे हजार मुद्राएँ गँवा दी, वाह रे मूढ़।

विषय-भोगरूपी थोड़े से सुख के पीछे पड़े रहनेवाले आत्मोद्धार रूपी महासुख को इसी तरह गँवा देते हैं। तलवार पर लिपटा शहद तो दीखता है, पर उसकी धार भी दीखनी चाहिए, वरना शहद चाटने वाले की जीभ कट जाती है। एक काकिणी के लिए पीछे लौटना मूर्खता है। मुक्ति-सुख वही प्राप्त करते हैं, जो पीछे नहीं लौटते, आगे बढ़ते रहते हैं और जिनका हर कदम सावधानी के साथ रखा जाता है तथा जो गुरुवचनों पर श्रद्धा रखते हैं।

70. अहं का विसर्जन

एक बार एक व्यक्ति ने पर्वत के समीप पहुँचकर देखा कि वह छोटा दिखाई दे रहा है और पर्वत ऊँचा। आज तक वह यही समझता था कि ऊँचाई में, उससे बड़ा और कोई नहीं है। उसका कद भी औसत आदमियों से कुछ अधिक ही था, लगभग सात फुट। अतः अभिमान कुछ अधिक ही था। लोकोक्ति है कि, जब ऊँट पहाड़ के नीचे आता है, तभी उसे अपनी निम्नता का भान होता है। इस व्यक्ति के साथ भी यही हुआ।

उस व्यक्ति ने निश्चय किया कि वह पर्वत से ऊँचा होकर दिखायेगा। उसने कमर कस ली और पर्वत को पददलित करते हुए अभिमान सहित चढ़ना प्रारम्भ किया। मन में उत्साह और विजेता बनने की चाह लिए, वह पर्वत पर चढ़ता ही गया और उसने देखा कि वह क्षण आ गया है, जब वह पर्वत को अपने पैरों के नीचे दबाये, उसके उच्चतम शिखर पर खड़ा है। उसे लगा कि अब वह किसी से

Scanned by CamScanner

छोटा नहीं है। सबसे बड़ा हो गया है। वह गर्व से फूला नहीं समाया। विजेता का भाव उसके मन में ही नहीं, चेहरे पर भी स्पष्ट झलक रहा था।

उसने पर्वत से कहा - 'देखो पर्वत! तुम पददलित हो गये हो। मैं तुमसे भी ऊँचा हो गया हूँ।'

उस व्यक्ति के इसप्रकार दंभपूर्ण वचन सुनकर पर्वत जोर से हँसा और बोला कि- 'तुम मुझसे ऊँचे कहाँ हुए हो? जिस ऊँचाई पर तुम इतना घमण्ड कर रहे हो, यह ऊँचाई तो तुमने मेरे कन्धों पर खड़े होकर प्राप्त की है। यदि मैं अपने कन्धे हटा लूँ तो तुम एक क्षण भी इस ऊँचाई पर ठहर नहीं सकोगे।'

पर्वत के इस कथन को सुनकर वह व्यक्ति बोला- 'संसार में जिसे भी ऊँचाई मिलती है, वह इसी तरह किसी-न-किसी के सहारे से ही तो मिलती है। तुम भी तो इसी तरह ऊँचे बने हो।'

यह सुन पर्वत बोला- 'नहीं, ऐसा नहीं है। मैंने अपनी ऊँचाई पाने के लिए किसी की छाती को रौंदा नहीं है, किसी को पद-दलित नहीं किया है, बल्कि कण-कण मिट्टी जोड़कर हवा, पानी की मार सहते हुए यह ऊँचाई पायी है। लाखों वर्षों की साधना और तपस्या का परिणाम है, मेरी यह ऊँचाई । तुम्हें भी यह ऊँचाई अपने सत्कर्मों एवं स्वावलम्बन से पाना चाहिए।'

उस व्यक्ति को पर्वत की बातों से लगा कि जैसे किसी ने उसे उच्चता के रहस्यों से परिचित करा दिया हो। उसे पर्वत की ऊँचाई के कारणों का ही भान नहीं हुआ, अपितु अपनी उच्चता के लिए मार्ग भी

सूझ गया। वह अपने स्थान पर झुका और हाथ जोड़कर पर्वत को नमस्कार कर बोला- 'मुझे क्षमा करना भाई, मैंने तुम्हारा अपमान किया। वास्तविक ऊँचाई किसी को पद-दलित करके नहीं अपितु साधना की सफलता और सत्कर्मों से मिलती है। आज मैं यह अच्छी तरह जान गया हूँ।'

पर्वत ने यह सुनकर कहा- 'हे मानव! अब तुम छोटे नहीं हो, बल्कि तुमने वास्तविक रूप से मुझसे भी अधिक ऊँचाई को पा लिया है, क्योंकि तुमने अपने अहंकार का विसर्जन कर झुकना सीख लिया है। वास्तव में अहं का विसर्जन ही सबसे बड़ी उच्चता है।'

71. चन्द्रगुप्त मुनि द्वारा गुरुसेवा

श्री भद्रबाहु आचार्य 12,000 मुनियों के साथ दक्षिण की ओर चले गये। वे वहाँ स्वाध्याय को सम्पन्न करने के लिए एक महावन के भीतर निषीधिका पूर्वक इसी गुफा में प्रविष्ट हुए। वहाँ उन्हें ''यहीं पर ठहरो''यह आकाशवाणी सुनायी दी। इससे भद्रबाहु ने यह निश्चय किया कि अब मेरी आयु बहुत थोड़ी शेष रही है। तब उन्होंने 11 अंगों के धारक अपने विशाखाचार्य नामक शिष्य को संघ का नायक बनाकर उसके साथ संघ को आगे भेज दिया। उस संघ के साथ वे चन्द्रगुप्तमौर्य (प्रभाचन्द्र) को भी भेजना चाहते थे। परन्तु उन्होंने यह आगम वाक्य सुन रखा था कि बारह बर्ष तक गुरु के चरणों की सेवा करनी चाहिए इसलिए एक अकेले वहीं रह गए शेष सब चले गये।

उधर भद्रबाहु ने संन्यास ग्रहण कर लिया तब वे चार

Scanned by CamScanner

आराधनाओं की आराधना-समाधि करते हुए स्थित रहे। चन्द्रगुप्त उस समय उपवास करते हुए उनके पास में स्थित थे। उस समय भद्रबाहुस्वामी ने चन्द्रगुप्त से कहा कि हे मुने! हमारे दर्शन में (जैन आगम में) कान्तारचर्या का मार्ग है। वन में आहार ग्रहण करने का विधान है, इसलिए तुम कुछ वृक्षों के पास तक चर्या के लिए जाओ। यदि अयोग्य नहीं तो गुरु के वचन का उल्लंघन कभी नहीं करना चाहिए, यह सोचकर चन्द्रगुप्त मुनि उनकी आज्ञानुसार चर्या के लिए चले गये।

उस समय उनके चित्त की परीक्षा करने के लिए एक पक्षी ने स्वयं अदृश्य रहकर सुवर्णमय कंगन विभूषित हाथ में करछिली और उस दाल एवं घी आदि से संयुक्त शाली धान का भात दिखलाया। उसको देखकर मुनि ने विचार किया कि इस प्रकार का आहार लेना योग्य नहीं है। इस प्रकार वे बिना आहार लिये ही वापस चले गये और वापस जाकर उन्होंने गुरुके पास में उपवास को ग्रहण करते हुए उनसे उपर्युक्त घटना कह दी।

गुरु ने चन्द्रगुप्त के पुण्य के माहात्म्य को जानकार उनसे कहा कि तुमने यह योग्य ही किया है। दूसरे दिन चन्द्रगुप्त आहार के निमित्त दूसरी ओर गये। उधर उन्हें रसोई, बर्तन, सुवर्णमय थाली और पानी का घड़ा आदि दिखा परन्तु पड़गाहन करने वाला वहाँ कोई नहीं था। इसलिए वे दूसरे दिन भी बिना आहार ग्रहण किए ही वापस आ गये। आज की घटना भी उन्होंने गुरुसे कह दी इस पर गुरुने कहा कि बहुत अच्छा किया तत्पश्चात् तीसरे दिन वे किसी दूसरी ओर गये वहाँ उनका पड़गाहन केवल एक ही स्त्री ने किया तब चन्द्रगुप्त मुनि

ने उससे कहा कि तुम अकेली हो और इधर मैं भी अकेला हूँ ऐसी अवस्था में हम दोनों की ही निंदा हो सकती है। इसलिए यहाँ रहना योग्य नहीं है।

यह कहकर बिना आहार किये ही वे वापस चले गये। चौथे दिन वे और दूसरे स्थान में गये वहाँ उन्होंने उस यक्षिणी के द्वारा निर्मित नगर को देखा वहाँ एक घर पर वे आहार करके आ गये। आज निरंतराय भोजन प्राप्त हो जाने का भी वृतान्त उन्होंने गुरुसे कह दिया गुरुने भी कह दिया कि अच्छा किया। इस प्रकार वे इच्छानुसार कभी उपवास रखते और कभी वहाँ आहार ग्रहण करके आ जाते इस प्रकार चन्द्रगुप्त मुनि, गुरुदेव की सेवा करते हुए वहाँ स्थित रहे। कुछ ही दिनों में भद्रबाहुस्वामी स्वर्गवासी हो गये।

चन्द्रगुप्त मुनि ने उनके निर्जीव शरीर को किसी ऊँचे स्थान में एक शिला के ऊपर रख दिया। फिर वे गुफा की भित्ती के ऊपर गुरु के चरणों को लिखकर उनकी आराधना करते हुए वहाँ स्थित रहे। इन चन्द्रगुप्त मुनि (प्रभाचन्द्राचार्य) की गुरुसेवा ने ही चन्द्रगुप्त मौर्य को इतिहास में अजर-अमर बना दिया।

अतः सभी को संत समागम रूप सेवा प्राप्त करना चाहिए अभी भी श्रमण (श्रवण) बेलगोला, गोमटेश्वर बाहुवली तीर्थ में चन्द्रगुप्तवसदी व चन्द्रगुप्त-गुहा इन सब बातों की साक्षी है।

72. रहमान का दयामय त्याग

एक समय रहमान नाम का किसान गरीबी में आई विपत्ति से छुटकारा पाने अपनी जान से प्यारी गाय को बेचने गया। बाजार में

Scanned by CamScanner

कई कसाई उसी गाय पर ललचाये, रहमान का दिल उनकी शक्ल देखकर ही कांप जाता था। मोल-भाव चल रहा था, कसाई लोग 60 रुपये तक देने को तैयार थे; पर रहमान ने सौदा नहीं किया।

तभी सेठ दाऊदयाल उस बाजार से गुजरे, जैसे ही गाय पर उनकी नजर पड़ी, वह उनकी हो गई। रहमान ने भी देखा भले आदमी हैं, मेरी गाय मजे में रहेगी, ऐसा विचार कर 35 रुपये में गाय सेठ को दे दी। आगे-आगे दाऊदयाल और पीछे-पीछे गाय लेकर रहमान चल रहा था, आँखों से आँसू गिर रहे थे। सेठ जी का घर आ गया, तब रहमान बोला-''सेठजी अपने हरवाहे से कह देना, मेरी गाय को मारे न'' इतना कहकर रहमान रो पड़ा; जैसे कि कोई पिता अपनी बेटी की विदा कर रोता है।

कालांतर में रहमान दाऊदयाल से कभी माँ को तीर्थयात्रा कराने के लिये, तो कभी माँ के अंतिम संस्कार के लिए कर्ज लेता है, पर भावना सदा देने की रखता है। इस बार रहमान की फसल ऐसी आई कि पूरे गाँव में धूम मच गई। रहमान तो प्रभु को याद करते हुए बार-बार सोच रहा था कि इस बार सारी फसल से सेठजी का कर्ज चुका दूँगा; पर भाग्य में कुछ और ही लिखा था।

पूस का महीना था, ठंड के मारे रहमान काँप रहा था। तापने को अग्नि जलाई, तभी तेज हवा चली, आग फैल गई और देखते ही देखते सारी फसल जल गई। रहमान दुःखी मन से आकाश की ओर निहार रहा था, सोच रहा था अब कैसे दाऊदयाल का कर्ज चुकाऊँगा।

तभी सेठजी का आदमी आया,''चलो रहमान! सेठजी ने

बुलाया है।'' रहमान सेठजी के घर जाकर उनके चरणों पर गिर पड़ा, ''हुजूर आप ही रक्षक हैं, सारी फसल जल गई, अब चाहे मारो, चाहे पालो।'' तब सेठजी ने रहमान को उठाकर गले से लगाया और बोला-''रहमान तू दुःखी मत हो, तेरे ऊपर मेरा कोई कर्ज नहीं है, मैं तो तुझे आजमा रहा था, आज से तू मेरे कर्ज से मुक्त है'' इतना सुनते ही रहमान बोला-''नहीं हुजूर यहाँ नहीं तो वहाँ चुकाना पड़ेगा।''

तब सेठजी बोले -''मैंने यहाँ-वहाँ सब जगह माफ किया, तू इंसान नहीं भगवान है। तूने विपत्ति में भी घाटा उठाकर मुझे गाय दी थी और हमारे धर्म की रक्षा की। आज से ये घर तेरे लिए सदा के लिये खुला है, जो चाहेगा, मिलेगा।''

तो बंधुओं ! रहमान का त्याग उसे महान् बना गया, इसी प्रकार जो धर्म मार्ग पर चलते हुए त्याग व्रत का पालन करते हैं, इतिहास उन्हें याद करता है।

73. एक साधै सब सधै

यदि कोई भी आदमी एक गुण धारण कर ले तो दूसरे सारे गुण भी उसके पास अपने-आप आ जायें। इसी तरह यदि एक अवगुण छोड़ दे तो सारे अवगुण भी अपने आप चले जायें। जैसे साधु के साथ साधु का और असाधु के साथ असाधु का मेल होता है, वैसे ही बात गुण और अवगुण के बारे में भी है।

एक सेठ था। उसके पास अपार सम्पत्ति थी, लेकिन उसका लड़का दुर्व्यसनी और अवारा था। सेठ ने बहुत कोशिश की कि किसी तरह वह सुधर जाय, पर उसकी आदत इतनी बिगड़ चुकी थी

Scanned by CamScanner

कि वह रास्ते पर आ ही नहीं रहा था। सेठ उसके कारण बहुत दुखित रहने लगा, लेकिन कुछ करते नहीं बनता था।

एक दिन उस सेठ के गाँव में एक साधु का आगमन हुआ। सेठ सत्संगति स्वभाव का था। वह साधु के पास आया करता। एक दिन दुःखी मन से उसने साधु महाराज से अपने लड़के के दुर्व्यसनी होने की बात कही और उनसे प्रार्थना की कि आप किसी तरह उसे रास्ते पर ला सकें तो मेरे कुल की रक्षा हो सकती है, नहीं तो मेरा हाल तो उस कहावत के अनुसार होगा, जिसमें कहा गया है, ''डूब्या वंस कबीर का, जाया पूत कमाल।''

साधु ने कहा -''उसे एक दिन मेरे पास भेज देना। तुम्हारा लड़का एक महीने के भीतर-भीतर ठीक हो जायेगा। उसमें किसी तरह का दोष नही रहेगा। तुम निश्चिंत रहो।''

सेठ ने अपने लड़के को साधु के पास जाने की बात कही। पहले तो वह टालता रहा, किन्तु फिर पिता ने अधिक आग्रह किया और कुछ खीझकर कहा कि जाने मात्र से तुम्हारा क्या बिगड़ता है, एक बार थोड़ी-सी देर के लिए हो आओ, तो उसने सोचा, पिताजी का इतना आग्रह है तो चलो, पाँच-सात मिनट के लिए हो आवें।

वह चला गया उस साधु के पास।

साधु ने उस लड़के को स्नेह से अपने पास बैठाया, उसकी पीठ पर हाथ फेरा और बोले - ''तुम्हारे कारण तुम्हारे पिताजी बहुत दुखी हैं, इसलिए मैं चाहता हूँ कि अपने व्यसनों में से तुम कम-से-कम एक व्यसन छोड़ दो।''

लड़के ने पूछा -''आप मुझे कौन-सा व्यसन छोड़ने के लिए कहते हैं ?'

साधु ने कहा - ''परस्त्री-गमन छोड़ सकते हो ?''

लड़के ने कहा - ''यह तो असम्भव है। इतना आनन्द तो मुझे और कहीं नहीं मिलता।''

साधु ने दूसरा प्रश्न पूछा -''शराब पीना छोड़ोगे ?''

लड़के ने कहा - ''यह तो और भी असम्भव है। शराब पीने से जो मस्ती आती है, वह और किसी चीज से नहीं।''

साधु महाराज ने आगे पूछा-''चोरी करना, जुआ खेलना, झूठ बोलना, इनमें से कोई-सी आदत छोड़ सकते हो।''

लड़के ने कहा-''और तो कोई-सा व्यसन मैं नहीं छोड़ सकूँगा, किन्तु झूठ बोलना जरूर छोड़ सकता हूँ।''

साधु ने कहा-''बस इतना काफी है। मैं तुम्हें और कुछ छोड़ने के लिए नहीं कहता। लेकिन झूठ छोड़ने की बात तुमने मंजूर की है, इस पर दृढ़ रहना।''

''मैंने जो वचन दिया है, उसमें फर्क नहीं पड़ेगा।''- कहकर लड़का वापस चला गया।

कुछ ही दिनों बाद वह लड़का अपने मित्रों के साथ वेश्या के कोठे पर जा रहा था। रास्ते में कुछ लोग मिल गये। उन्होंने उन मित्रों से पूछा-''कहाँ जा रहे हैं आप लोग ?''

वह लड़का तपाक से बोला - ''हम लोग तो नूरजहाँ के

Scanned by CamScanner

कोठे पर जा रहे हैं।'

दूसरे मित्रों ने उसे लड़के से कहा-''यार, यह बात किसी से कहने की होती है क्या ? और कहीं का नाम ले लेते!''

इस पर लड़के ने कहा-''मेरे दोस्तो! मैंने सत्य बोलने का संकल्प लिया है। कुछ भी हो, असत्य वचन कभी नहीं बोलूँगा।''

मित्रों ने कहा -''तुम ऐसे ही युधिष्ठिर के अवतार हो तो कल से ही अपना रास्ता नापो। अब तुम्हारा हमारा साथ नहीं। ऐसी सत्यवादिता हमें नहीं चाहिए।''

लड़के ने कहा -''अच्छी बात है।''

और दूसरे दिन से कोई साथी न होने के कारण धीरे-धीरे उसकी कोठे पर जाने की आदत छूट गई। कुछ दिन बाद जब वह अपने जुआरी मित्रों के साथ जुएँ के अड्डे पर जा रहा था तो नगर के एक बूढ़े आदमी ने पूछ लिया -''यह मित्रों की टोली कहाँ जा रही है ?''

लड़के ने सहज भाव से बता दिया-''हम लोग तो जुआ खेलने जा रहे हैं''और उस अड्डे का नाम भी बता दिया, जहाँ वे जा रहे थे।

साथी मित्रों ने आपत्ति की और जब उसने अपने सत्य बोलने के संकल्प की बात कही, तो वे भी कन्नी काट गये। इस तरह साथियों के अभाव में उसके जुआ खेलने की आदत भी छूट गयी।

कुछ दिन बाद यह लड़का अपने चोर मित्रों के साथ निकला चोरी करने। रात का समय था। रास्ते में सिपाही मिल गये। उन्होंने

पूछा - ''इस अंधेरी रात में तुम लोग कहाँ और क्या करने जा रहे हो ?''

लड़के ने चट कह दिया -''हम लोग तो चोरी करने निकले हैं।''

दूसरे चोरों ने उस लड़के को बहुत धमकाया -''यार, तुम्हारा साथ तो खतरनाक है, कहीं मरवा डालोगे तुम।''

लड़के ने कहा -''कुछ भी हो, मैं झूठ तो बोलने से रहा।''

इस तरह चोरों का साथ भी छूट गया। अब तो वह एकदम अकेला पड़ गया। धीरे-धीरे उसके सारे दुर्व्यसन छूट गये। जैसे-शराब पीना, जुआखेलना, चोरी करना, वेश्यागमन आदि-आदि। उसका मन थोड़ा-थोड़ा घर के धंधे में लगने लगा, क्योंकि न तो उसका कोई साथी ही रहा था और न उसमें कोई दुर्व्यसन ही।

लड़के में यह परिवर्तन देखकर उसके पिता को बहुत आनन्द हुआ और उसने इस चमत्कार को महात्मा जी का प्रसाद माना।

एक मात्र व्यसन-झूठ छूटने से जिस तरह दूसरे दुर्गुण छूट गये, उसी तरह सत्य के आने से एक-एक करके दूसरे गुण भी उसमें आने लगे। धीरे-धीरे वह एक चतुर, ईमानदार और प्रतिष्ठित व्यापारी बन गया।

74. ईर्ष्या से नहीं मित्रता से जीतो

यूरोप में माइकेल एंजिलो नामक चित्रकार की लोकप्रियता को देख किसी दूसरे चित्रकार ने ईर्ष्या के वश को सोचा- ''मैं ऐसा

Scanned by CamScanner

चित्र बनाऊँ कि लोग माइकेल का नाम भूलकर मेरे नाम को जपने लगें।'' उसने एक सुन्दर चित्र बनाया, चित्र बहुत सुन्दर था लेकिन एक कमी थी वह किसी की पकड़ में नहीं आ रही थी यह कमी सबको अखरती थी लेकिन कोई समझ नहीं पा रहा था कि कमी क्या है ?

एक दिन माइकेल उस मार्ग पर जा रहा था। उसकी नजर उस चित्र पर पड़ी, चित्र बहुत सुन्दर था लेकिन माइकेल की नजर चित्र की कमी पर पहुँच गई। उसने कहा-''भाई! तुम्हारा चित्र बहुत सुन्दर है लेकिन इसमें एक कमी है। यदि कहो तो मैं सुधार दूँ।'' चित्रकार ने चौंककर कहा- ''क्या ? तुम चित्रकार हो, कहीं मेरा चित्र और बिगाड़ तो नहीं दोगे।'' माइकेल ने कहा-''तुम घबराओ नहीं, मैं तुम्हारा चित्र नहीं बिगाड़ूंगा।'' चित्रकार ने तूलिका दे दी। माइकेल ने दोनों आँखो में काली बिन्दिया लगा दी। चित्र बोलता हुआ नजर आने लगा।

चित्र की सुन्दरता देखकर चित्रकार ने कहा- ''तुम्हारा क्या नाम है ? क्या व्यापार है एवं कहाँ के रहने वाले हो ?''.....। माइकेल ने कहा-''भाई! मेरा नाम माइकेल है।'' यह नाम सुनते ही चित्रकार के आश्चर्य का ठिकाना ही नहीं रहा, वह हाथ जोड़कर बोला- ''भाई, माइकेल! मैं तुम्हारी लोकप्रियता तथा उन्नति से बहुत जलता था, तुम्हें परास्त करने के लिए मैंने यह चित्र बनाया था लेकिन सरलता, सहजता एवं सहानुभूति ने मेरा हृदय परिवर्तित कर दिया है। मैं अब कभी ईर्ष्या नहीं करूंगा।''

सारांश : किसी से ईर्ष्या करके उसके बराबर नहीं बना जा सकता अपितु उससे मित्रता रखकर / बढ़ाकर उसके समान हुआ जा सकता है।

75. नैतिक आदर्श

प्राचीन भारत के एक चिकित्सक अपने शिष्यों के साथ औषधियों की खोज में निकले। रास्ते में उन्हें एक विचित्र प्रकार का फूल दिखायी दिया। शोध कार्य करने के लिये उसे तोड़ना ही चाहते थे किन्तु वह खेत की मेड़ पर जाकर एकाएक रुक गये।

यह देखकर उनके शिष्य ने पूछा-उस फूल को तोड़ने में क्या कठिनाई है। मैं अभी तोड़कर लाता हूँ। चिकित्सक बोले- नहीं हमें खेत के मालिक से पूछे बिना उस फूल को नहीं तोड़ना चाहिये।

शिष्य ने कहा- पर आपको तो राजाज्ञा मिली हुई है कि आप कहीं से कोई भी वनस्पति तोड़ सकते हैं, फिर खेत के मालिक से पूछने की क्या आवश्यकता है ?

चिकित्सक बोले-राजाज्ञा तो मिली हुई है किन्तु राजाज्ञा के आधार पर खेत के मालिक की उपेक्षा की गई तो फिर नैतिक आदर्श कहाँ रहेगा ?

यह कहकर चिकित्सक कई मील पैदल चलकर खेत के मालिक के पास पहुँचे और उससे पूछ लेने के बाद ही उन्होंने वह फूल तोड़ा।

Scanned by CamScanner

सफलता के सूत्र

- अपनी विद्वता पर गर्व करना सबसे बड़ा अज्ञान है।

– महावीर स्वामी

- प्रसन्न और मधुर व्यक्ति सदैव सफल होता है।

– वाल्टेयर

- जो अपना काम किये बिना भोजन करते हैं, वे चोर हैं।

– महात्मागाँधी

- लोगों में बल की नहीं, संकल्प शक्ति की कमी होती है।

– विक्टर ह्यगो

- त्याग के बिना कोई उन्नति नहीं हो सकती।

– जेम्स एलन

- मनुष्य छोटी से छोटी गलती की बड़ी से बड़ी सजा पाता है।

– सदाशिव सुगंध

- मुझे अपने मित्रों से बचाओ, शत्रुओं से मैं स्वयं बच लूँगा।

– वाल्टेयर

- ख्याति प्राप्त करने के लिए घोर संग्राम करना पड़ता है।

– इलाचंन्द्र जोशी

- गलती करने पर उसे छुपाए नहीं, वरना अपराध हो जाएगा।

– कन्फ्यूशियस

- वही उन्नति कर सकता है जो स्वयं को उपदेश देता है।

– स्वामी रामतीर्थ

- आत्मगौरव नष्ट करके जीना मृत्यु से भी बुरा है।

– भर्तृहरि

Scanned by CamScanner

श्री दिगम्बर जैन सिद्ध क्षेत्र

कुण्डलपुर (म.प्र.)

लम्बाई : 245 फुट	चौड़ाई : 105 फुट	ऊँचाई 171 फुट

Scanned by CamScanner